RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2019-21

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ
ब्रह्मज्ञान ही अमृत है।
सरसावा

तारतम मंजरी

वर्ष ४ अंक १२ दिसम्बर २०१६ बुद्धजी शाका ३४१ विक्रम सवंत २०७६ पृष्ठ संख्या ३२

ब्रह्मज्ञान ही अमृत है

प्रेम ही जीवन है

आध्यात्मिक उन्नति के आठ सूत्र

१. नियमित ध्यान २. नियमित स्वाध्याय ३. सात्विक अल्पाहार
४. प्रबल पुरुषार्थ ५. परब्रह्म के प्रति समर्पण एवं गुरुजनों के कथनों के प्रति श्रद्धा
६. शिष्टाचार ७. दृढ़ संकल्प ८. अटूट आत्मविश्वास

स्वत्वाधिकारी

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ

नकुड रोड, सरसावा, जिला-सहारनपुर, उ.प्र.

Email : shriprannathgyanpeeth@ gmail.com **Youtube**: SPJIN **Website**: www. spjin.org
Twitter : @Raajan Swami **Whats App**: +917533876060 ;

अनुक्रमणिका

1.	सम्पादकीय – दुःख से ही मनुष्य की जागृति		1
2.	बीतक समीक्षा – 4 : श्री देवचन्द्र जी को दर्शन	कृष्ण कुमार कालड़ा	4
3.	परमात्मा का बनाया यह संसार ...	आचार्य सुभाष	7
4.	प्रेम का वास्तविक स्वरूप	ज्योति निजानन्दी	11
5.	साथ जी जागिये, सुनके शब्द आखर	नैन्सी परनामी	14
6.	प्रेम ही इंसान को परमात्मा तक ले जाता है	गीता ठाकुर	17
7.	'दोपहर का सूरज' की संक्षिप्त भूमिका	अमर लाल सेठी	21
8.	सतगुरू की महिमा	आशीष जुनेजा	23
9.	गुजरात की जागनी यात्रा	राहुल श्रीमाली	25
10.	ऋतुचर्या एवं दिनचर्या	आचार्य सुभाष	26

'तारतम मंजरी के पाठकों से निवेदन'

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से 'मासिक प्रकाशित होनेवाली " तारतम मंजरी' " पत्रिका वेवसाईट के साथ साथ व्हाट्सएप, फेसबुक के माध्यम से आप सभी के हाथों तक पहुचाने का प्रयास किया जाता है। अब नयी योजना के अन्तर्गत 'व्हाट्सएप में एक ग्रुप बनाई जायेगी, उस ग्रुप में केवल "तारतम मंजरी" ही प्रत्येक महीने डाली जायेगी'। सभी पाठकों से निवेदन है कि ग्रुप में जुडने के लियें आप 'अपना व्हाट्सएप नम्बर व्यक्तिगत रुप से या ईमेल के माध्यम से पूरा नाम,पता सहित भेजें'।

E-mail: tartammanjari@gmail.com
सम्पर्क सूत्र :–
+91 9725389547 (आचार्य सुभाष जी)
+91 9314193262 (जुनेजा बाबूजी)

सदस्यता शुल्क	
भारत में	विदेश में
वार्षिक 130 रू.	650 रू.
आजीवन 1200 रू.	.....

लेख में प्रगट किये गये विचार लेखक के व्यक्तिगत विचार हैं इनके प्रति सम्पादक, प्रकाशक उत्तरदायी नहीं है।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्यायक्षेत्र सहारनपुर होगा।

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232
सम्पर्क सूत्र–8650851010

Youtube:SPJIN
वेबसाईट :– www.spjin.org
ई मेल :– shriprannathgyanpeeth@gmail.co

सम्पादकीय

दुःख से ही मनुष्य की जागृति

जिसके जीवन में जितने दुख होते हैं, वह उतना ही सबल होकर सुख की यात्रा पर निकलता है। क्योंकि दुख विपरीत स्थितियों से जूझने की क्षमता का विकास कर हमारी ऊर्जा को जगाता है।

कभी–कभी मौसम में बड़ी विषमता दिखाई देती है। गर्मियों में बारिश हो जाती है और ठंडी हवा मौसम को सुहावना बना देती है। बरसात के मौसम में बादलों का नामोनिशान तक नहीं रहता। न कीचड़, न दुर्गंध और न ही गंदगी। कभी–कभी सर्दी के मौसम में ठंड और कोहरे–पाले से निजात मिल जाती है। हल्के–फुल्के कपड़ों में आराम से काम कर सकते हैं, घूम–फिर सकते हैं। लेकिन इन बदलावों में खुश होने की जरूरत नहीं, क्योंकि मौसम में इस प्रकार की प्रतिकूलता हमारे हित में नहीं होती।

एक कहावत है– जितने दिन जेठ तपता है, उतने ही दिन सावन भी बरसता है। जेठ में जितने दिन पुरवाई चलती है, हवा ठंडी हो जाती है, उतने ही दिन सावन में धूल उड़ती है। जेठ नहीं तपेगा, तो सावन भी नहीं बरसेगा। लेकिन एक बात यह भी है कि यदि ग्रीष्म कष्टदायक है, तो वर्षा आनंददायक। यही बात मनुष्य के जीवन में सुख–दुख के संबंध में उतनी ही सटीक है। ज्येष्ठ कष्ट का प्रतीक है, तो सावन आनंद का, लेकिन एक के बिना दूसरे की प्राप्ति असंभव है। इसी प्रकार दुख के बिना सुख का अनुभव भी असंभव है।

व्यक्ति तथा समाज दोनों के विकास के लिए परस्पर विरोधी भावों अथवा ऊर्जा की उपस्थिति अनिवार्य है। किसी भाव के कारण ही अभाव का तथा अभाव विशेष के कारण ही भाव विशेष का महत्व है। मृत्यु, अंधकार, विषमता, विरह अथवा अपमान आदि के उपस्थित होने पर ही जीवन की अमरता, प्रकाश, अनुकूलता, मिलन अथवा मान–सम्मान के भाव की अनुभूति की जा सकती है। इसी प्रकार यदि दुख नहीं आएगा, तो सुख भी नहीं आएगा, क्योंकि दुख की अनुभूति के बाद ही संभव है सुख की अनुभूति।

ग्रीष्म हो या वर्षा, पतझड़ हो या वसंत, ये

एक–दूसरे के विरोधी नहीं, अपितु पूरक हैं। एक के अभाव में दूसरे में आनंद कहां?यही स्थिति सुख–दुख के साथ भी जुड़ी हुई है। जिसने कभी दुख नहीं देखा, केवल सुख ही सुख का अनुभव किया, उसके लिए सुख की क्या कीमत? तब सुख पाने के लिए सुखों की मात्रा बढ़ानी पड़ेगी, वरना जीवन नीरस हो जाएगा। सुख–सुविधाओं का अंत नहीं, लेकिन मनुष्य की सीमा है। सुख–सुविधाओं में ठहराव आ गया, तो जीवन में नीरसता आ गई और सुख–सुविधा छिन गई, तो दुख ही दुख। किसी से कोई सुविधा छीन लो, तो दुख और फिर से दे दो तो सुख, लेकिन सुविधा की निरंतरता में सुख नहीं रहता। सुख की अनुभूति के लिए अनिवार्य है दुख की अनुभूति भी। सुख–दुख मनुष्य मन की सापेक्ष अवस्थाएं हैं।

यदि हम अपने जीवन में घटित हुए दुखों का अवलोकन करें, तो पाएंगे कि हमें जीवन में जाने कितने दुख और कष्ट झेलने पड़ते हैं, अवमानना सहनी पड़ती है, उन्हें दूर भी करना होता है। यदि हम अपने जीवन में आने वाले कष्टों का विश्लेषण करें, तो पाते हैं कि कुछ कष्ट या कोई कष्ट विशेष जीवन में सबसे ज्यादा पीड़ित करता रहा, लेकिन साथ ही हम यह भी पाते हैं कि इस एक बड़े कष्ट के कारण हम असंख्य छोटे–छोटे कष्टों को भूल जाते हैं। इसका अर्थ यह है कि हर कष्ट अपने से छोटे कष्टों को छोटा कर देता है। हर परेशानी दूसरी परेशानियों को प्रभावहीन कर देती है। जिसे हम बड़ी परेशानी मानते हैं, यदि वह न होती, तो इससे छोटी परेशानी भी तब कम कष्टदायक न होती। लेकिन बड़ी परेशानियों के कारण हम छोटी परेशानियों से उबर जाते हैं, जो हमारे आनंद के लिए ही नहीं, उन्नति के लिए भी अनिवार्य है।

दुख कष्टों से जूझने की क्षमता का विकास कर देता है । जितना बड़ा दुख, उतना ही क्षमतावान मनुष्य। हम कष्टों और समस्याओं से पलायन कर स्वयं अपने सुखों से दूर होते जाते हैं। असीमित उपभोग द्वारा भी हम अपने दुखों को कम कर लेते हैं। शरीर को जितना अधिक आराम और सुविधाएं देते हैं, वह उतना ही निष्क्रिय और जड़ होता जाता है। परिश्रम अथवा व्यायाम करेंगे, तो थोड़ा कष्ट तो जरूर होगा, पर स्वस्थ शरीर का सुख भी मिलेगा। कम खाएंगे तथा भूख लगने पर खाएंगे, तो भोजन के स्वाद का सुख भी मिलेगा। जो सारे दिन खाद्य–अखाद्य का उपभोग करते रहते हैं, उनके लिए भोजन में स्वाद का सुख कहां?इस प्रकार दुख को सहन करने से हमारी ऊर्जा जागती है। हमारी क्षमताओं का विकास होता जाता है।

जीवन में जितना कष्ट आएगा, उतना ही आपमें सहनशीलता आएगी और आप धैर्यवान होते जाएंगे। धैर्य एक ऐसा गुण है, जो व्यक्ति की कार्यक्षमता में वृद्धि करता है, उसे आगे ले जाता है।

उसे संपूर्णता प्रदान करता है। बड़ा दुख उपचार कर देता है सभी छोटे–छोटे दुखों का और असंख्य छोटे–छोटे दुखों के उपचार से प्राप्त सुख असीम सुख में परिवर्तित होकर आनंद ही देता है।असीम आनंद को प्राप्त करने हेतु एक ही सर्वश्रेष्ठ मार्ग है–साधना का!साधक व्यक्ति ही लौकिक या आध्यात्मिक जगत में प्राप्त होनेवाले दुःखों को सहन करते हुयें परम चिरस्थायी सुःख की अनुभूति में लगे रहते हैं और अन्ततोगत्वा परमात्मा के चिरस्थायी सुख को प्राप्त कर ही लेते हैं।

किरंतन की वाणी भी कहती है–

दुःख रे प्यारो मेरे प्राण को ।
सो मैं छोड़ियो क्यों कर जाए,
जो मैं लिया है बुलाय ।।

परमात्मा को हमेशा याद करना चाहिए, केवल दुःख की घड़ी में ही नहीं–

दुःख में सुमिरन सब करे सुख में करै न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे तो दुःख काहे को होय।।

लेखकों के लिए आवश्यक सूचना

सुन्दरसाथ के चरणों में विनम्र प्रार्थना है कि जो भी सुन्दरसाथ लिखने में कुशल,योग्य है। जो अपना भाव तारतम वाणी और शास्त्रों के माध्यम से दूसरों तक पहुंचाना चाहते हैं ऐसे सुन्दरसाथ अपना लेख ईमेल (E-mail) या वटसप (watsapp) के माध्यम से ज्ञानपीठ में भेजें। लेख भेजने की अन्तिम तीथि प्रत्येक महिने की 1 तारिख तक रहेगी। समय पर भेजे गये लेखों को ही उस महिने की पत्रिका में प्रकाशित किया जायेगा।अन्यथा आगे आनेवाली महिनों में प्रकाशित की जायेगी।

लेख भेजने का नियम–
1–शुद्ध टाईप होनी चाहिए।
2–हस्तलिखित शुद्ध एवं स्पष्ट होना चाहिए।
3–टाईप किया गया लेख हो तो ओरजिनल कांपी होनी चाहिए।
4–डाक से ज्ञानपीठ के पते भर भेज सकते हैं।
5–हस्तलिखित लेख को PDF बनाकर ही भेजें, ताकि पढने में और टाईपिंग में असुविधा न हो।

तारतम मंजरी मासिक पत्रिका "लेख" प्रेषित हेतु एवं अन्य कोई भी असुविधा के लियें निम्नलिखित EMAIL और दूरभाष नम्बरों पर सम्पर्क करें।

tartammanjari@gmail.com

+9193141 93262 (जूनेजा बाबूजी)
+919725389547 (आचार्य सुभाष जी)

बीतक समीक्षा - ४

प्रस्तुति एवं प्रलेखन
कृष्ण कुमार कालड़ा, जयपुर

*'तारतम मंजरी' के सितम्बर 2019 अंक से हमने पूज्य **श्री राजन स्वामी** जी द्वारा वर्ष 2018 में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में की गई बीतक चर्चा पर आधारित लेखों की एक श्रृंखला प्रारभ की है। इसमें प्रत्येक अंक में एक विशेष प्रसंग/घटनाक्रम का संक्षिप्त उल्लेख कर यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जायेगा कि यह हमारे लिये क्यों महत्वपूर्ण है तथा इससे हमें क्या शिक्षा लेनी चाहिये। आशा है, पाठकों को यह श्रृंखला रुचिकर व उपयोगी लगेगी। आपके सुझाव सादर आमंत्रित हैं।*

– संपादक

नवतनपुरी की लीला –।।
श्री देवचन्द्र जी को दर्शन

नवतनपुरी में श्री देवचन्द्र जी चौदह वर्षों तक निष्ठाबद्वहोकर भागवत कथा का श्रवण करते हैं जिसके पश्चात् अक्षरातीत श्री राज जी अपने आवेश स्वरूप से प्रकट होकर उन्हे श्याम जी के मन्दिर में दर्शन देते हैं तथा उनके धाम ह्रदय में विराजमान हो जाते हैं। परिणामस्वरूप उन्हें हद से लेकर बेहद तथा उससे परे परमधाम के पच्चीस पक्षों का सम्पूर्ण दृश्य दिखाई देने लगता है। यह घटना संवत 1678 आश्विन माह के कृष्ण पक्ष में रविवार को प्रातःकाल में घटित होती है। वह स्वरूप किशोर तथा अति सुन्दर था जिसने नित्य वृन्दावन में महारास की लीला की थी।

वय किशोर अति सुन्दर, स्वरूप खेला जो वृन्दावन।
देख श्री देवचन्द्र जी ने कह्या, जैसी गवाही दई मन।। (बीतक 6/27)

प्रायः भ्रान्तिवश उक्त चौपाई का अर्थ यह किया जाता है कि श्री देवचन्द्र जी को महारास की लीला करने वाले वृन्दावन बिहारी श्री कृष्ण जी ने दर्शन दिया

था। किन्तु वास्तविकता यह है कि अक्षरातीत के जिस आवेश स्वरूप ने ब्रज–रास में लीला की थी, वही आवेश स्वरूप परमधाम के श्रृंगार में श्री देवचन्द्र जी के समक्ष प्रकट हुआ था जिसकी नवरंग स्वामी कृत सुन्दर सागर के प्रकरण 26 की चौपाई 6–8 साक्षी में मिलती हैः

चरणी अंग केसरी चलकै,
बागो स्वेत जड़ित रंग झलकै।
फैंटो नील पीत रंग रमकै,
उपरैणी रंग आसमानी चमकै।
पग रंग सिंदुरिए सोहै,
कोटि कोटि जोत में जोहै।
रंग रंग में अनन्त रंग रंगे,
तेज मे तेज उठै तंरगै।।

सोभा कंहू मैं कहां लो केती,
पूरण परसोतम धनी सेती।।
खेल्यो ब्रज रास में जेही,
साक्षात स्वरूप विराजै तेही।।

अर्थात् दर्शन देने वाले स्वरूप का वहीं श्रृंगार था – सिन्दुरिया रंग की पाग, केशरिया रंग की इजार, आसमानी रंग की पिछौरी , श्वेत रंग का बागा तथा नीलो न पीलो बीच के रंग का पटुका – जो परमधाम में विराजमान श्री राज जी का है। जबकि ' रास ' ग्रन्थ के प्रकरण 8 में वर्णित रास बिहारी का श्रृंगार अलग हैः

पीड़ी ऊपर पायचा,
ने झीणी कुरली झलवार।
केसरिया रंग सूथनी,
इन्द्रावती निरखे करार।। (चौ.10)

पीली पटोली पेहेरी एक जुगते
माहें विविध पेरे जड़ाव।
जीव तणुं जीवन ज्यारे जोइए,
त्यारे नव मुकाय लगार।। (चौ. 13)

रंग सेंदुरिए पछेड़ी,
अने माहें कसवनी भांत ।
छेड़े तार ने कसनी कोरे,
इन्द्रावती जुए करी खांत।। (चौ. 21)

अर्थात् रास बिहारी के श्रृंगार में केशरिया रंग की सूथनी है, जिसके पायचे में बारीक चुन्नटें झलक रही हैं। पीले रंग की पटोली है तथा सिन्दुरिया रंग की पिछौरी है।

इसी प्रकार ''मस्तक मुकट सोहामणो'' (चौ. 37) का कथन यही दर्शाता है कि उनके सिर पर पाग नही बल्कि मुकुट है। श्री राज जी के घुंघराले बालों के स्थान पर रास बिहारी के बालों की चोटी गुंथी है जैसा कि चौपाई 43 के कथन – '' बेण गूंथी एक नवल भांत नी '' – से स्पष्ट है।

इसके अतिरिक्त बीतक में भी कहीं भी ऐसा वर्णन नहीं मिलता कि श्री देवचन्द्र जी को दर्शन देने वाला स्वरूप रास के श्रृंगार में था। प्रकरण 6 की चौपाई 27 में जो लिखा है कि '' सरूप खेला जो वृन्दावन '' – उसका अर्थ यह है कि जिस आवेश स्वरूप ने ब्रज–रास में लीला की थी , उसी आवेश स्वरूप ने परमधाम के श्रृंगार में आकर दर्शन दिया।

यहाँ यह भी प्रश्न उठता है कि श्री देवचन्द्र जी को रास बिहारी क्यों दर्शन देंगे?'' पिया किए अति प्रसन्न,

तीन बेर दिए दर्शन'' – जब श्री राज जी ही सिपाही एवं ब्रज बिहारी के भेष में आते है तो तीसरी बार रास बिहारी क्यों आयेंगे?केवल 'सुन्दर सागर बीतक' में वर्णित किया गया है कि पहले श्री देवचन्द्र जी को श्री राज जी का परमधाम वाला श्रृंगार दिखाई दिया और कभी रास बिहारी का । लेकिन श्रृंगार दिखाई देना तथा श्रृंगार करने वाला दोनों अलग –अलग बातें है। अतः यही कहा जा सकता है कि श्री राज जी ने ही देवचन्द्र जी को दर्शन दिया। सत्य तो यह है कि श्री राज जी का स्वरूप कहीं आता–जाता नहीं है – '' हमको खेल दिखावन काज, हमसो आगे आये श्री राज। '' वस्तुतः श्री राज जी हम आत्माओं से कभी अलग नहीं हो सकते। वे हर पल श्यामा जी की आत्मा में भी विराजमान है। यह बात अलग है कि इस जागनी के बहामाण्ड में लीला रूप में अब विराजमान होते है।

इस सम्बन्ध में एक अन्य भ्रान्ति यह भी है कि श्री देवचन्द्र जी को श्री राज के दर्शन भागवत श्रवण के कारण हुआ था। परन्तु ऐसा नहीं है। यदि भागवत श्रवण से दर्शन हो जाते हैं तो इसके रचियता को क्यों दर्शन नहीं हुए? श्री देवचन्द्र जी ने चौदह वर्ष भागवत सुनी परन्तु कान्ह जी भट्ट तो सारी उम्र भागवत सुनाते रहे लेकिन उनको कभी भी श्री राज जी का दर्शन नहीं हुआ। वास्तविकता तो यह है कि श्री राज जी ने श्री देवचन्द्र जी को निसबत व मूल सम्बन्ध के कारण दर्शन दिया। इससे पूर्व भी जब श्री देवचन्द्र जी को दो बार दर्शन हुआ था तब उन्होंने कोनसी भागवत सुनी थी – पहली बार विरह में तड़फे तो दर्शन हुआ और दूसरी बार चितवनी की तो दर्शन हुआ।

जब श्री देवचन्द्र जी के तन में श्री राज जी विराजमान हो जाते हैं तब उनके मुख से एक चौपाई अवतरित होती है – '' निजमान श्री कृष्ण जी, अनादि अछारातीत, सो तो अब जाहेर भए, सब विध वतन सहीत।'' अर्थात् जिस अक्षरातीत ने ब्रज–रास में श्री कृष्ण के नाम से लीला की थी तथा जो अनादि व अक्षर से भी परे हैं, अब अपने परमधाम के सम्पूर्ण ज्ञान, शोभा तथा आनन्द के साथ मेरे धाम ह्रदय में प्रकट हो गये हैं।

यह मान्यता पूर्णतः भ्रान्तिपूर्ण है कि दर्शन के समय श्री राज जी श्री देवचन्द्र जी से कहते हैं कि मेरा नाम श्री कृष्ण है और मैं अनादि हूँ तथा अक्षर से परे अक्षरातीत हूँ ।

अन्त में, यही कहा जा सकता है कि हमें शब्दों/नामों के विवाद में नहीं पड़ना चाहिये। पारम्परिक रूप से '' निजनाम श्री कृष्ण जी'' का तारतम्य मान्य है तथा इसे ही प्रत्येक ग्रन्थ के प्रारम्भ में मंगलाचरण के रूप में लिखा जाता है किन्तु सनंघ वाणी (प्र. 42 चौ. 16) के अनुसार ''कोई दूजा मरद न कहावहीं, एक मेंहेदी पाक पूरन'' अर्थात् श्री प्राणनाथ जी के अतिरिक्त इस जागनी ब्रहामाण में कोई दूसरा अक्षरातीत नहीं हो सकता।

परमात्मा का बनाया यह संसार कभी पुराना नहीं होता

आचार्य सुभाष, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

हम इस पृथ्वी पर रह रहे हैं। हमारी यह पृथ्वी हमने या हमारे पूर्वजों ने नहीं बनाई और न यह अपने आप अथवा बिना किसी निमित्त कारण के बनी है। हमारे इस सौर मण्डल के सूर्य आदि ग्रहों व उपग्रहों को भी हमने या हमारे पूवजों ने नहीं बनाया। यह समस्त जगत व ब्रह्माण्ड किसने बनाया है, इसका उत्तर है कि ब्रह्माण्ड में एक सच्चिदानन्द स्वरूप, सर्वज्ञ, सर्व शक्तिमान, सर्वव्यापक सत्ता है जिसने सप्रयोजन यह संसार या ब्रह्माण्ड बनाया है।

उसी सत्ता ने जड़ जगत सहित चेतन प्राणी जगत को भी बनाया है। प्राणी जगत में हम एक नियम देखते हैं कि इसमें एक प्राणी व मनुष्य जन्म लेता है, वृद्धि को प्राप्त होता है, फिर वृद्धि कुछ समय के लिये रूक जाती है और उसके बाद वृद्धावस्था आती है। कुछ समय तक मनुष्य व अन्य प्राणी इस अवस्था में रहकर फिर मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। सभी प्राणियों का जीवन काल या आयु भिन्न–भिन्न होती है। मनुष्य का जीवन काल भी एक सौ वर्ष का माना जाता है परन्तु वर्तमान में एक सौ वर्ष पूरे करने वाले लोग बहुत ही कम होते हैं। इसके अनेक कारण हैं। मृत्यु का कारण प्रायः रोग या दुर्घटनायें हाती है।

यदि हम इन पर नियन्त्रण पा लें, तो मनुष्य आदि प्राणियों की आयु को कुछ अधिक वर्ष बढ़ाया जा सकता है। मनुष्य के यदि शरीर की बात करें तो यह बचपन, किशोरावस्था सहित युवावस्था में पूर्ण निखार पर देखने योग्य होता है। इसके बाद इसके शारीरिक बल व शक्ति में कमी आनी आरम्भ हो जाती है और वृद्धावस्था व्यतीत करते हुए मृत्यु हो जाती है। मनुष्य आदि प्राणियों का आवागमन संसार में सृष्टि के आरम्भ से लगा हुआ है। आवागमन अथवा जन्म–मृत्यु–जन्म का चक्र भी परमात्मा का बनाया हुआ एक अद्वितीय नियम है। प्राणियों के जन्म व मरण का चक्र इस नियम का पालन करता है।

इसके अनुसार जिस जीव(प्राणी) का जन्म होता है उसकी मृत्यु भी अवश्य होगी। यही सिद्धान्त सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एवं प्रलय पर भी लागू होता है परन्तु सृष्टि का काल इतना अधिक है कि इसे देखकर इसके रचयिता की महत्ता व

दिव्यता का ज्ञान होता है और अनायास हमारा सिर उसके उपकारों को स्मरण करके उसके सम्मुख झुक जाता है।

सृष्टि को देख कर आश्चर्य होता है कि इतनी पुरानी सृष्टि भी पुरानी न होकर नवीन है। वसन्त ऋतु में वनस्पति जगत में जो श्रृंगार की स्थिति देखने को मिलती है उससे यह सृष्टि रमणीय व भोग्य लगती है। संसार में कुछ ऐसे स्थान हैं जो बहुत ही सुन्दर हैं।

लोग यहां पर्यटन की ष्टि से जाते हैं और इन स्थानों की सुन्दरता को अपनी आंखों व कैमरे में कैद कर जीवन भर अपनी मधुर स्मृतियों को यदा कदा स्मरण कर आह्लादित व प्रसन्न होते रहते हैं। संसार के जितने भी मत–मतान्तर हैं वह सृष्टि को बने हुए अब तक जो समय व्यतीत हो चुका है, इसका सही उत्तर नहीं दे पाते। केवल सत्य सनातम वैदिक धर्म ही इसका उत्तर देता है।

वैदिक प्रामाणिक गणना के अनुसार सृष्टि की रचना को 1,96,08,53,119 वर्ष पूरे हो चुके हैं और हिन्दी मास चैत्र शुक्ल पक्ष से नया वर्ष आरम्भ हो गया है। इतने वर्ष व्यतीत हो जाने के बाद तो यह संसार नष्ट हो जाना चाहिये था परन्तु परमात्मा ने इस सृष्टि को ऐसा बनाया है कि यह न तो पुरानी होती है, न ही जीर्ण होती है और न ही इसका अन्त व मृत्यु होती है। सृष्टि का अस्तित्व बने रहने का काल ईश्वर का एक दिन कहलाता है और वह 4.32 अरब वर्ष होता है।

इसके बाद प्रलय हो जाती है जो ब्रह्म या ईश्वर की रात्रि कहलाती है। 4.32 अरब वर्ष तक यह सृष्टि विद्यमान रहती है। प्रलय का अर्थ है कि सृष्टि नष्ट हो जाती है और यह सृष्टि के कारण सत्व, रज व तम गुणों की साम्यावस्था में परिणित हो जाती है। हमारी सृष्टि 1.96 अरब वर्ष पुरानी हो चुकी है। इतने वर्षों से हमारी पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा कर रही है।

चन्द्रमा भी हमारी पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है। इतने वर्षों में न तो इसकी गति में कोई कमी आयी है और न ही कभी आकर्षण के सिद्धान्त से यह आपस में टकराये हैं। इसका कारण परमात्मा की अपरम्पार महिमा है। वह सर्वशक्तिमान है और उसी ने ही इस ब्रह्माण्ड को धारण व व्यवस्था में रखा हुआ है।

परमात्मा की व्यवस्था पर विचार करते हैं तो हमें यह व्यवस्था सर्वोत्तम लगती है। परमात्मा हमसे कुछ लेता नहीं है। उसने एक पिता, माता व आचार्य के समान हमें सुख प्रदान किये हैं। उसकी पा व व्यवस्था से सभी जीवों को उनके कर्मों के अनुसार जन्म, आयु व सुख–दुःख मिलते हैं। मनुष्य योनि में हमें श्रेष्ठ कर्म करने का अवसर मिलता है। श्रेष्ठ कर्म का आधार सद्ज्ञान है। यह सद्ज्ञान परमात्मा ने अपने निज ज्ञान वेदों के रूप में सृष्टि के आरम्भ में हमारे पूर्वज चार ऋषियों को दिया था।

उन्हीं से परम्परा आरम्भ होकर यह वेद ज्ञान अनेक ऋषियों से होता हुआ हम तक पहुंचा और अब हमें प्राप्त है। हम वेद ज्ञान को उसके सत्य व यथार्थ रूप में जानकर और उसके अनुरूप ही कर्म व पुरुषार्थ कर इस जीवन से भी श्रेष्ठ देवतुल्य मनुष्य जीवन, अक्षय सुखों अथवा मोक्ष प्राप्ति के अधिकारी हो जाते हैं। वर्तमान में मनुष्य की औसत आयु 60–70 वर्ष है जिसके बीतने पर मनुष्य की मृत्यु हो जाती है।

मृत्यु होने पर मनुष्य ने जीवन भर जैसे कर्म किये होते हैं, उन कर्मों का परमात्मा को सर्वव्यापक व सर्वान्तर्यामी होने से सम्यक ज्ञान रहता है। वह हमें हमारे कर्मों के अनुसार ही नया जन्म देता है जिसमें हमें सुख व दुःख भोगने का अवसर मिलता है। कर्म व भोग की उभय योनि इस मनुष्य योनि में मनुष्य अपने वर्तमान व भावी जीवन को सुखदायी करने के लिये अपनी बुद्धि व ज्ञान के अनुसार श्रेष्ठ कर्मों का वरण कर सकता है। कर्म–फल भोग और जन्म–मृत्यु का यह क्रम इसी प्रकार से पूरी सृष्टिकाल तक चलता रहता है।

हमें आश्चर्य होता है कि परमात्मा ने केवल हमारी पृथ्वी को ही नहीं अपितु ब्रह्माण्ड में ऐसी अनन्त पृथ्वीयों पर भी इसी प्रकार की वनस्पति एवं प्राणी रचनायें कर जीवों को उनके पूर्वजन्म के कर्मानुसार जन्म दिया है। परमात्मा सभी जीवों के लिए उनके कर्मानुसार नया जन्म, पुनर्जन्म एवं सुख–दुःख की व्यवस्था करता है। वस्तुतः सभी जीवात्मायें वा प्राणी परमात्मा के इस उपकार के लिये उसके अत्यन्त तज्ञ हैं जिससे वह कभी उऋण नहीं हो सकते।

परमात्मा हमसे अपने लिये कोई अपेक्षा भी नहीं करता है। उसको हमसे किसी वस्तु अथवा हमारी स्तुति–प्रार्थनाओं की भी अपेक्षा नहीं है। यदि हम उसकी स्तुति करते हैं तो इससे हमारा ही कल्याण होता है। परमात्मा अनादि काल में जैसा था, वर्तमान में भी वैसा ही है और भविष्य में भी उसी प्रकार के गुण, कर्म व स्वभाव वाला रहेगा। हम परमात्मा के उपकारों के लिये अपने सच्चे मन से केवल उसकी स्तुति, प्रार्थना व उपासना ही कर सकते हैं एवं इसके साथ निर्बल दूसरे मनुष्यों के सुख के लिये भी पुरुषार्थ कर सकते हैं जिसका फल हमें परमात्मा की व्यवस्था से आत्मिक सुख के रुप में मिलता है।

वेद में एक मन्त्र आता है जिसका भाव है कि मनुष्य को परमात्मा की सृष्टि को देखना चाहिये। परमात्मा ने यह सृष्टि ऐसी बनाई है कि जो न पुरानी होती है न नष्ट होती है। हमारी यह सृष्टि वा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड नाश व प्रलय को तभी प्राप्त होगा कि जब परमात्मा इसका प्रलय करेंगे। सृष्टि से पदार्थों को लेकर मनुष्य भवन, कागज, भोजन, कार, स्कूटर, कमप्यूटर, वस्त्र आदि जो कुछ भी बनाता है वह कुछ दिनों व वर्षों के व्यतीत हो जाने

पर पुराना होकर नष्ट हो जाता है परन्तु यह नियम जड़–जंगम सृष्टि पर घटता हुआ दिखता नहीं है। इसका कारण केवल परमात्मा द्वारा इसे नवीन रखना ही हो सकता है। न केवल हमारी यह सृष्टि अपितु सृष्टि के अन्य ग्रह व उपग्रह भी अब तक अपना यथोचित कार्य कर रहे हैं जिसके लिये यह परमात्मा के द्वारा बनाये गये थे।

ब्रह्माण्ड की विशालता का भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता। इसके लिये तो इस ब्रह्माण्ड को अनन्त कहना ही समीचीन प्रतीत होता है। किसी कवि ने परमात्मा की महिमा को विचार कर एक भजन लिखा है जिसकी आरम्भिक पंक्तियां हैं 'तेरा पार किसी ने भी पाया नहीं, ष्टि किसी की तू आया नहीं। तेरा पार किसी ने भी पाया नहीं।।' वेदादि ने भी नेति–नेति कह कर उस परमात्मा का गुणगान किया है। हम चाहे कितने भी ज्ञानी हो जायें व ईश्वर के बारे में बड़े–बड़े सही अनुमान भी लगा लें, परन्तु परमात्मा की महिमा उससे भी कहीं अधिक होगी। इसका अर्थ यह है कि हम परमात्मा की महिमा की कल्पना नहीं कर सकते। हम जीवन में छोटी–छोटी वस्तुओं को प्राप्त करने के लिये लालायित रहते हैं जिनका एक या दो बार ही उपयोग होता है। परमात्मा अनादि काल से हम पर अनेक प्रकार के उपकार करता आ रहा हैं जिन्हें हम जानते नहीं या भूल चुके हैं। अतः हमारा कर्तव्य है कि हम अधिक से अधिक परमात्मा विषयक साहित्य का अध्ययन करें और अधिक से अधिक सद्कर्मों को करते हुए उन सभी को उसको समर्पित कर दें।

अपने सद्कर्मों के प्रति हमारा किसी प्रकार से स्वार्थ का भाव नहीं होना चाहिये। ऐसा करके ही हम अपनी आत्मा को शुद्ध व पवित्र तथा परमात्मा से मिलने व उसके साक्षात्कार के योग्य बना सकते हैं। इस स्थिति को प्राप्त होकर ईश्वर–साक्षात्कार में हम क्या पायेंगे और हमारे आनन्द की क्या सीमा होगी, इसका हम अनुमान भी नहीं कर सकते।

परमात्मा ने हमारे व हमारे समान असंख्य वा अनन्त जीवों के लिये कभी पुरानी न होने वाली इस सृष्टि को बनाया है। इस सृष्टि को बनाने वाला वह परमात्मा इस पूरे ब्रह्माण्ड का रचयिता व अधिष्ठाता है। उसकी महिमा को हम पूर्णरूपेण कभी नहीं जान सकते।

यदि हम परमात्मा के नाम का स्मरण व जप करते हुए तथा उसका चिन्तन–मनन करते हुए अपने जीवन को व्यतीत करें, यही मनुष्य मात्र का कर्तव्य है। ऐसा करते हुए हमें अपने किसी अन्य कर्तव्य की भी उपेक्षा नहीं करनी है। संसारिक कार्य को करते हुये ही हमें प्रियतम परब्रह्म के चरणों में अपना सर्वस्व समर्पण करना है।इसी में सम्पूर्ण मनुष्य मात्र का कल्याण है।

प्रेम का वास्तविक स्वरूप

ज्योति निजानन्दी, सरसावा

सुन्दरसाथ जी, पूर्ण ब्रह्म परमात्मा अक्षरातीत धाम धनी को पाने के लिए प्रेम होना अति आवश्यक है वाणी भी कह रही है ''ल्याओ प्यार करो दीदार'' तो अब प्रेम के विषय में धाम धनी ने वाणी में क्या कहा है–

प्रेम का तात्पर्य आकर्षण नहीं प्रेम शब्दों से परे है जहाँ शरीर का आभास है वहाँ प्रेम नहीं जहाँ इन्द्रियों का आभास संसार के अस्तित्व का आभास है वहाँ भी प्रेम नहीं है।

प्रेम देखाऊं तुमको साथ जी,
जित अपना मूल वतन।
प्रेम धनी को अंग है, कहूं पाइए ना या बिन।।

श्री धाम धनी महामती जी के द्वारा क्या कह रहे हैं अब मैं तुमको प्रेम के यथार्थ स्वरूप की पहचान कराता हूँ वास्तव में प्रेम अपने मूल घर परमधाम में ही है प्रेम धनी का ही अंग है राज जी के हृदय में प्रेम का निवास है धाम धनी के अतिरिक्त प्रेम अन्यंत्र कहीं भी नहीं मिलता।

प्रेम तो शब्दातीत कहया,
जो हुआ ब्रह्म के घर।
सो तो निराकार के पार के पार,
इत दुनी पावे क्यों कर।।

दुनिया में जो भी ज्ञान है आदिनारायण के द्वारा ऋषियों के अन्दर प्रकट हुआ वेद के रूप में है और वेदों का ज्ञान अक्षर के मन अव्याकृत में स्थित है मूल अक्षर ब्रह्म जिस प्रेम को जानते हैं। स्पष्ट है वो आदिनारायण को मालूम नहीं तो ऋषियों और संसारी लोगों को कैसे मालूम हो सकता है।

प्रेम नाम दुनिया मिने, ब्रह्मसृष्टि ल्याई इत।
ए प्रेम इनों जाहेर किया,
ना तो प्रेम दुनी में कित।।

सर्वप्रथम ब्रह्मसृष्टियों ने ब्रज लीला में प्रेम को प्रकट किया जागनी लीला में तारतम वाणी के माध्यम से प्रेम के वास्तविक स्वरूप की पहचान हो सकी है इससे पहले संसार के मनीषी और भक्त जन प्रेम के बारे में बहुत कुछ कहते थे किन्तु प्रेम के वास्तविक स्वरूप में बारे में कुछ भी नहीं जानते थे।

शुक व्यास कहे भागवत में प्रेम ना त्रिगुन पास।
प्रेम बसे बह्मसृष्टि में
जो खेले स्वरूप ब्रजरास।।

शाश्वत प्रेम के माध्यम से ब्रज की गोपियो ने संसार रूपी सागर को सहज ही पार कर लिया। इस प्रेम की बराबरी में कोई भी संसार की वस्तु नहीं है संसारिक या लौकिक प्रेम तो मोह से परिपूर्ण तथा स्वार्थमयी है मोह में सुख भोगने की कामना है प्रेम में त्याग है, समर्पण है मोह का विनाश हो जाता है प्रेम का विनाश नहीं होता अविनाशी है प्रेम में धैर्य है मोह देह का धर्म है और प्रेम परमात्मा का दिव्य स्वरूप है इसकी समानता किसी से नहीं की जा सकती देवर्षि नारद ने भक्ति सूत्र में कहा है।

''अनिर्वचनीय प्रेम स्वरूप'' – प्रेम का स्वरूप शब्दातीत है ''मूका स्वादनवत्'' जैसे गूंगा गुड़ खाकर प्रसन्न होता है, हंसता है, नाचता है पर गुड़ का स्वाद नहीं बता सकता प्रेम अनुभव के द्वारा जाना जा सकता है प्रेम का रूप गुणों से रहित है, कामनाओं से रहित है, प्रतिक्षण बढ़ने वाला है, एक रस है सूक्ष्म और केवल अनुभव गम्य है, इस पराभूत परिश्रान्त हृदय का विश्रान्ति स्थल एक प्रेम है।

आत्मा के अनुकूल भी प्रेम ही है आत्मा स्वतः प्रेम स्वरूप है और प्रेम नित्य है जो रस रूप एवं आनन्द से युक्त है वहीं प्रेम परात्म स्वरूप है वाणी कहती है कोई नहीं नेह समाना कितना भी विवेचन किया जाए कोई भी संसार का पदार्थ गुण प्रेम की तुलना में नहीं आता बड़े बड़े धर्म ग्रन्थ भी भरे पड़े हैं कबीर जी कहते हैं,

पोथी पढ़ पढ़ जग मुआ भया ना पंडित कोय।
ढाई आखर प्रेम के पढे सो पंडित होय।।

अर्थात् सभी का सारतत्व प्रेम है प्रेम ब्रह्म दोउ एक है इश्क ही खुदा है, प्रेम ही परमात्मा है इसमे कोई सन्देह नहीं। Love is God and God is Love.

धाम धनी की कृपा से ही यही एक प्रेमामृत शब्द गूंज रहा है जिसके समान दूसरा कुछ भी श्रेष्ठ नहीं है।

प्रेम प्रेम सब कोई कहे प्रेम न चीन्हे कोय।
आठ पहर भीना रहे प्रेम कहावे सोय।।

यदि आपके अन्दर प्रेम नहीं है आपके लिए धाम का दरवाजा बन्द है धनी ने पहले ही कह दिया ल्याओ प्यार करो दीदार प्रेम का तात्पर्य लौकिक आकर्षण नहीं है किसी के पास धन होता है तो उसके प्रति हमारा आकर्षण बढ जाता है किसी के पास समाजिक प्रतिष्ठा होती है तो उससे हमारा लगाव बढ जाता है इसको प्रेम नहीं कहते तमोगुण में मोह होता है रजोगुण में राग होता है सत्त्वगुण में स्नेह होता है लेकिन प्रेम शब्दों से परे हैं

नवधा से न्यारा कहया चौदह भवन में नाहीं।
सो प्रेम कहा से पाइए जो रहत गोपीयन माहिं।।

ब्रह्मा, विष्णु, शिव के पास प्रेम नहीं है आदिनारायण के पास प्रेम नहीं है तो उनकी सृष्टि में प्रेम कहां से आ जाएगा? जो लोग सवेरे से शाम तक धन कमाने मे, नबंर दो के कामों में दूसरो का धन छीनने से खुशी महसूस करते हैं उनके पास तो प्रेम के सागर की एक बूँद भी नहीं आ सकती प्रेम किसी पर मुग्ध होना नहीं है प्रेम की मंजिल वहां से शुरू होती है जहां शरीर एवं संसार समाप्त हो जाए।

पुराण संहिता में वर्णन आता है कि राधा श्री कृष्ण को देखते देखते कृष्ण के रूप में बदल गई और श्री कृष्ण राधा के रूप में परिवर्तित हो गए भेद समाप्त, कौने स्त्री, कौन पुरूष जब यह मंजिल आ जाए तो समझना चाहिए कि आपके अन्दर अब प्रेम आ रहा है प्रेम पवित्र है।

वचने कामस काढिए, राखिए नहीं रजमात्र।
जोगवाई सर्वे जीतिए, त्यारे थैए प्रेम ना पात्र।।

प्रेम की पात्रता कब होगी जब हम वाणी में अपने अन्दर, काम, क्रोध, मद, लोभ, अहंकार को समाप्त कर लेंगे तब हमारे अन्दर प्रेम की पात्रता आएगी कि हम प्रेम की पहली सीढ़ी अब चढ रहे हैं। जहां मनोविकार है वहां प्रेम सुपने में भी नहीं आ सकता, अक्षरातीत धाम धनी सुन्दरसाथ से कह रहे हैं कि प्रेम में मगन होइयो, खुल्या दरवाजा धाम। प्रेम के द्वारा ही धाम का दरवाजा खोल सकते हैं और स्थिति ऐसी आएगी सैयां जाने धाम में बैठिया, ए तो घर में जाग के बैठिया।। इस संसार में रहते हुए भी लगेगा हम तो परमधाम में पच्चीस पक्षों में घूम रहे हैं हर कोई चाहता है हमारे अन्दर प्रेम आ जाए प्रेम माला के जप से नहीं पैदा होगा प्रेम परिक्रमा करने से नहीं होगा प्रेम ढोलक पीटने से नहीं होगा आखिर प्रेम आएगा कहां से यदि अक्षरातीत प्रेम के सागर हैं, हमारे मूल तन प्रेम के सागर हैं वहदत के सम्बन्ध से हमारे तनो में लबालब प्रेम भरा है इस माया के संसार में हम खेल देख रहे हैं तो हमारे अन्दर प्रेम क्यों नहीं आ रहा धनी ने कहा है।

हक सुपने में भी संग रहे इन विध अरस परस
अरबो खरबों की दौलत से यदि प्रेम खरीदना चाहें तो प्रेम नहीं खरीद सकते संसार में किसी से आपको लगाव हो जाएगा आप करोड़ दो करोड़ रूपये किसी पर लुटा देंगे तो हो सकता है वह आपके उपर फना हो जाए अक्षरातीत का प्रेम पैसे के बल पर नहीं खरीदा जा सकता।

मन पंछी जब तक उड़े विषय वासनाओ माहें।
प्रेम बाज की चपेंट में जब तक आया नाहें।।
जब आया प्रेम सुहागी, मोह जल लेहरा भागी।

सुन्दरसाथ जी, प्रेम का रस ऐसा है जिसके हृदय में यह आ जाता है वह धन्य धन्य हो जाता है प्रेम की सुगन्धि से ही ज्ञान, सेवा, समर्पण की सुगन्धि है हृदय में प्रेम नही तो सेवा, समर्पण ज्ञान सब शुष्क हो जाते हैं ''का बृवर्षा जव कृषि सुखाने'' खेती सूख जाने पर वर्षा से क्या लाभ, वैसे ही प्रेम के बिना जीवन सूना है।

आचार्य श्री सूर्यप्रताप जी द्वारा श्री प्राणनाथ ज्ञान केन्द्र, पन्ना में
२१ अक्टूबर, २०१९ को दिये गये प्रवचन पर आधारित

साथ जी जागिये, सुनके शब्द आखर

डॉ. नैन्सी परनामी, जयपुर

सुन्दरसाथ जी यह शब्द 400 वर्ष पुराने हैं। इन्द्रावती की आतम और स्वयं धाम धनी श्री अक्षरातीत ने सुन्दरसाथ को जगाने के लिये वाणी में कई बार पुकार की। प्रश्न यह है क्या हम जागृत हैं या नहीं, हैं तो भी क्यों नहीं? एक व्यक्ति की आंखे खुली हुई हैं तो भी वो व्यक्ति सोया हुआ है, आत्मा अभी जागृत नहीं है लेकिन शरीर जाग रहा है। मनुष्य की आत्मा जब तक जागृत नहीं होगी, तब तक वह जागा नहीं कहा जा सकता। आज ज्ञान से जागनी तो सभी की होती है।

परमधाम की राह पर चलने वाले आपको बहुत दिखाई देंगे, लेकिन होंगे नहीं। ईमान से पक्का जो होगा, वह हवा के तूफान से डगमगायेगा नहीं। तूफान से जिसका ईमान डगमगा जाये वो सुन्दरसाथ कैसा?

जयराम कंसारा का प्रसंग बीतक में आता है। जब चुगलखोर चुगली के लिये राजा के पास जाने लगता है तो सुन्दरसाथ में खलबली मच जाती है। सुन्दरसाथ सोचते हैं कि हम पकड़े गये तो हमारा जीवन बर्बाद हो जायेगा। जब चर्चा का समय आया तो पूरी सभा खाली, कुछ सुन्दरसाथ के सिवा?यह परीक्षा थी ईमान और विश्वास की राह की। मुश्किल स्थिति में हम घबरा जाते हैं, मदद न मिलने पर कटुता आ जाती है और लाचारी हमें पंगु बना देती है। इन भावनाओं की बजाय सकारात्मकता हमें राह दिखाती है। यह सीख तो हम बेजुबान पशु से भी ले सकते हैं।

एक किसान के पास बूढ़ा गधा था, खेत पर कुछ सामान ले जाने और छोटा–मोटा बोझ ढ़ोहने के लिये किसान उसका इस्तेमाल करता था। एक दिन वह गधा खेत में बने कुऐं में गिर गया। निष्ठुर किसान ने पूरी स्थिति का आंकलन किया और पडौसियों को बुलाकर उन्हें पूरी स्थिति से अवगत कराया। उसने कहा कि हम सब मिलकर कुऐं में मिट्टी डालते हैं ताकि बूढ़े गधे को वहीं दफनाकर उसे उसके कष्ट से छुटकारा दिलाया जा सके। गधे ने जब सुना तो वह खौफ़ से पागल जैसा हो गया, लेकिन बाद में जब किसान और उसके पड़ौसी फावडे से निकाल–निकालकर मिट्टी कुऐं में डालने लगे तो उसके मन में विचार उठा। गधे ने सोचा कि हर बार जब फावड़ाभर मिट्टी उस पर गिरेगी तो वह पीठ हिलाकर झटक कर उसे गिरा देगा। इस तरह गिराई गई मिट्टी पर वह फिर खड़ा हो जायेगा। उसने ऐसा ही किया, फिर मिट्टी के हर प्रहार के साथ वह खुद से कहता "पीठ हिलाकर इसे गिरा दो और ऊपर उठो दो–फिर गिरा दो और ऊपर उठो।" वह खुद को

प्रोत्साहित व प्रेरित करने के लिये इसे बार–बार किसी मंत्र की तरह दोहराता। चाहे उस पर गिरने वाली मिट्टी पत्थर की चोट कितनी ही जोर से पड़ती अथवा पूरी स्थिति उसे कितनी ही हताशाजनक लगती, बूढ़ा खच्चर घबराहट पर काबू पाकर वही करता रहा। बहुत वक्त नहीं गुजरा था कि गधे ने पूरी तरह घायल और थके होने के बाद भी उस कुऐं की दीवार से बाहर जीतने के भाव से कदम रखे। ऐसा लगता था कि ऊपर से गिरने वाली मिट्टी उसे कुऐं में ही दफन कर देगी। उसी ने उसे उबार लिया था। जिन्दगी भी इसी तरह से है हमें समस्याओं का सामना करना चाहिये और घबराहट, कटुता अथवा लाचारी के कारण हमें हार नहीं माननी चाहिए।

वास्तव में हम सुन्दरसाथ जागृत नहीं है। जागृत हुआ मनुष्य अज्ञानता की राह पर नहीं चलता। आज तो मनुष्य धन के लिये यह सोचता है कि हमें सरस्वती की वंदना की बजाय स्कूलों में लक्ष्मी की आरती से दिन की शुरूआत करनी चाहिए। आज करोड़ों सुन्दरसाथ देवताओं के दरवाजे पर चले जाते हैं और कहते हैं कि हम शरीर का धर्म निभा रहे हैं। जीव का मालिक आदिनारायण है, उनकी पूजा करने में क्या दोष है? सुन्दरसाथ जी विचार करें, यह बैकुण्ठ किसके लिये बना है–जीव की मुक्ति के लिये या आपके लिये?विष्णु जी और लक्ष्मी जी का जब विवाह हुआ, तब विष्णुजी ने लक्ष्मी जी को प्रसन्न करने के लिये बैकुण्ठ की रचना की। यह मुक्ति वैसी ही है जैसे हम पन्ना में जाकर होटल में रहते हैं। जब तक मानव की जेब गरम है, होटल वाला भी नरम है। यदि आप भक्ति करते हैं तो पुण्यरूपी धन से तुम्हारा शरीर भरा हुआ है। इन्द्र भगवान भी खुश हैं। आपकी जेब खाली होने लगी तो वापिस आपको पृथ्वी पर दुबारा भेज दिया जायेगा। पन्ना को मुक्तिधाम कहा जाता है। आत्माओं की मुक्ति होने वाली है या जीवो की मुक्ति? जो स्वयं मुक्त है, उसे मुक्ति कोई नहीं दे सकता। आत्मा त्रिगुणातीत है, जीव बंधा हुआ है। आत्मा जीव के सहारे रहते–रहते सुख और दुःख का अनुभव करने लगती है। जिस प्रकार एक बच्चे का एक्सीडेंट होने पर माँ रोने लगती है, जबकि माँ को खरोंच भी नहीं आई, लेकिन बेटे का दर्द देखकर सहन नहीं कर पाती। इसी प्रकार आत्मा को दुनिया की कोई वस्तु छू नहीं सकती, लेकिन जीव के साथ रहने के कारण दुःख का अनुभव करने लगती है। आत्मा जीव अलग–अलग हैं, जब पूर्णब्रह्म की पहचान हो जाये तभी आत्मा जागृत होगी।

"ऐसा आवत दिल हुकमें, यों इश्कें आतम खड़ी होए।" ज्ञान से अगर मनुष्य शुष्क है, प्रेम नहीं है तो वह परमहंस की अवस्था प्राप्त नहीं कर सकता। आत्मा से जागृत होने पर ही मनुष्य परमहंस की अवस्था को प्राप्त कर सकता है।

"क्या देखी रे दुनिया, जो इनको ना करे अखंड।" प्रश्न यह है कि ब्रह्म सृष्टि के जीवों के कर्म कैसे होने चाहिए?धर्म और भक्ति दो मार्ग ऐसे हैं जिससे इंसान बदल जाये, यदि मनुष्य बदला नहीं तो अभी वह जागृत अवस्था में नहीं पहुंचा है। जिस प्रकार लोहे को अग्नि के किनारे पर रख दें तो वह लोहा गरम तो हो जायेगा, लेकिन अग्नि ठंडी होने पर वापिस ठंडा हो जायेगा और लोहा वैसे का वैसा ही रहेगा। लेकिन इसके विपरीत लोहे को भट्टी में डालकर और ऊपर से उसे हथौड़े से

कूटा भी जाये तो उसका आकार निश्चित रूप से बदल जायेगा। इसी प्रकार कोने में बैठकर ज्ञान सुनना लोहे के कोने में बैठने के समान है। अगर आप आत्मज्ञान की सभा में बैठे हैं तो चर्चा आपके हृदय में बैठनी चाहिये, जो मनुष्य को आत्मा की ओर ले जाती है, जब आत्मा परमात्मा की ओर जाने लगे तो वह जागनी मानी जायेगी। ज्ञान के बाद अहंकार आ जाता है तो वह इंसान बदल नहीं सकता। कबीर जी ने इसलिये कहा है "ज्ञानी से ज्ञानी मिले तो करे ज्ञान की बात। गधे से गधे मिले तो करे लातमलात।"

श्रीजी ने कहा है–"मारया कहया, काढ़या कहया, तो बाकी रहया खुदा।"

ज्ञान एक अहम के समान है। ऊँट पर बैठने के बाद भी व्यक्ति को संभलना पड़ता है। ऊँट हिलता–डुलता रहता है। इसी तरह कोरे ज्ञान को लेने के बाद उस राह पर चलने के बाद ही परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है। अहंकार लेने के बाद वह इंसान गिरता जाता है। परिपक्व होने पर फल नहीं कहता कि मैं पका हुआ हूँ। वृक्ष पर फल लगे हुये हों तो वह झुका रहता है। ज्ञान से परिपूर्ण मानव अकड़ में नहीं रहता, सदा झुका ही रहता है। ज्ञान से जागृत होन के बाद भी दूसरी जागृति की जरूरत है। साधना ही ऐसा मार्ग है तथा ध्यान और चितवनी के द्वारा ही मनुष्य परमात्मा को प्राप्त कर सकता है।

उपनिषद में कहा गया है "यदि आप परमात्मा को चाहते हैं तो परमात्मा को हृदय में विराजमान करो। आप धीरे–धीरे परमात्मा की ओर बढ़ने लगते है तो कर्म और कुकर्म छूटने लगते हैं, कर्म के बंधन से मुक्ति पाने का एकमात्र तरीका है परमात्मा का ध्यान करना।" वर्तमान में सत, तप, ज्ञान कलियुग में कम होता जा रहा है। शुद्ध घी मात्र कहने से केवल शुद्ध घी नहीं बन जाता, निजानन्द सम्प्रदाय का ठप्पा लगने मात्र से ही आप प्रणामी नहीं बन जाते। यह ठप्पा केवल उस होटल के समान है जब तक कि आपकी जेब गरम है। श्रीजी ने स्वयं वाणी में कहा है यदि तुम एक बार मेरे नाम का सिमरन करो तो मैं तुम्हें भव सागर से पार कर दूंगा। आज तक किसी देवता ने यह शब्द नहीं कहे कि मैं तुम्हें भव सागर से पार कर दूंगा। ब्रह्मवाणी हमें कर्म से मुक्त करती है।

चाणक्य ने भी कहा है–संसार में कोई भी व्यक्ति पाप से मुक्त नहीं है। अन्न खाने वाला हो, अन्न देने वाला हो या अन्न पकाने वाला हो, सबके सब पाप की भागीदारी में लिप्त है। अन्न हजारों कीड़ों को मारकर हमारे पास तक आता है।

केवल ब्रह्मवाणी ही हमें पाप से मुक्त करती है। जब मनुष्य तन के लिये देवता भी तरसते हैं और हम आज मनुष्य तन पाकर भी अग्निरूपी परमात्मा के किनारे पर बैठे हैं। यदि हम उस अग्नि में मिल जायें तो परमहंस की अवस्था को प्राप्त कर सकते हैं।

भृतहरि ने भी कहा है–"हे मानव तू तप नहीं करता, तू तप में तप रहा है।" हमें अग्नि की मिट्टी में नहीं तपना, परमात्मा की अग्नि में तपना है। परमात्मा की साधना करते–करते जीव धीरे–धीरे परमात्मा के सानिध्य में आने लगता है। साथ ही ध्यान आपको पवित्र करता है। यही है असली जागनी–साथ जी जागिये सुनके शब्द आखर।"

प्रेम ही इंसान को परमात्मा तक ले जाता है

गीता ठाकुर, जयपुर

पूजा, पाठ, जप, ध्यान, अनुष्ठान आदि जो भी क्रियायें की जाती हैं, उनका मूल उद्देश्य परमात्मा के प्रति अपनी निष्ठा को गहरा करना होता है। ज्यों–ज्यों निष्ठा गहरी होती जाती है, त्यों–त्यों परमात्मा के प्रति प्रेम भाव बढ़ता जाता है। यही प्रेम भाव धीरे–धीरे परिपक्व होकर भक्ति का रूप धारण कर लेता है। इस प्रकार उपासना का मूल तात्पर्य ईश्वर के प्रति प्रेम का विकास करना ही है।

परमात्मा के प्रति विकसित प्रेम जब अपनी चरमावधि में पहुँचता है, तब वह केवल परमात्मा तक ही सीमित नहीं रहता। वह विश्व रूप परमात्मा तक फैल जाता है। सच्चे भक्त और परमात्मा के सच्चे प्रेमी की पहचान यही है कि उसका प्रेम–भाव संसार के सारे जीवों के प्रति प्रवाहित होता रहता है। कोई व्यक्ति कितनी ही पूजा और ध्यान, जप आदि क्यों न करता हो, पर उसका प्रेम भाव संकुचित हो, उसका प्रसार प्राणि मात्र तक न हुआ हो तो उसे भक्त नहीं माना जा सकता।भगवान् का भक्त, परमात्मा को प्रेम करने वाला अपनी आत्मा और समाज के नैतिक नियमों को भी प्यार करता है। कारण यह होता है कि नैतिक नियमों में आदर्शवाद का समन्वय होता है और आदर्शवाद का ही एक व्यावहारिक रूप होता है। अध्यात्म का सम्बन्ध आत्मा और आत्मा का परमात्मा से होता है। संसार से परमात्मा की ओर उन्मुख होने का यह एक क्रम है। भगवान का भक्त इस पावन क्रम से विमुख नहीं हो सकता, जो परमात्मा को प्रेम करेगा वह उससे सम्बन्धित इस क्रम में भी प्रेम–भाव रखेगा।

जिसने आदर्शवाद को प्रेम करना सीख लिया उसने मानो परमात्मा को पाने का सूत्र पकड़ लिया। परमात्मा के मिलन में अपार आनन्द होता है। लेकिन उसकी ओर ले आने वाले इस क्रम में भी कम आनन्द नहीं होता। जो आत्मा द्वारा स्वीत समाज के नैतिक नियमों का पालन करता रहता है, आदर्शवाद का व्यवहार करता है, वह समाज की ष्टि में ऊँचा उठ जाता है। समाज उससे प्रेम करने लगता है। ऐसे भाग्यवान व्यक्ति जहाँ रहते हैं उसके आस पास का वातावरण स्वर्गीय भावों से भरा रहता है। कटुता और कलुष का उसके समीप कोई स्थान

नहीं होता। जिस प्रकार का निर्विघ्न और निर्विरोध आनन्द परमात्मा के मिलन से मिलता है, उसी प्रकार का आनंद आदर्शवाद के निर्वाह में प्राप्त होता है।स्वर्ग की उपलब्धि किसी लोक विशेष की उपलब्धि नहीं है। वह अनुकूल और पावन परिस्थितियों का एक धार्मिक नाम है। जहाँ सुन्दर, सुखदायक और कर्त्व्यपूर्ण परिस्थितियाँ होंगी, वह स्वर्ग ही माना जायेगा। ईश्वर के सच्चे भक्त में प्रेम की जो पावन धारा बहती रहती है, उसके आधार पर उसके चारों ओर की परिस्थितियाँ भी प्रेमपूर्ण बनी रहती हैं। इसलिये भक्त–जन हर समय स्वर्ग में ही निवास किया करते हैं।

साधना का मन्तव्य ईश्वरीय प्रेम प्राप्त करना ही माना गया है। यदि साधना सच्ची है तो उसका परिणाम प्रेम के रूप में ही मिलना चाहिये। सच्चे साधक का हृदय प्रेम की धारा से परिप्लावित हो जाता है। वह प्राणि–मात्र में अपनी आत्मा के दर्शन करने लगता है। आत्मीयता और उदारता प्रेम का ही तो रूप होता है। आत्मीयता का भाव मिलते ही संसार का दुःख–सुख साधक को अपना दुःख–सुख मालूम होने लगता है।जिस प्रकार कुयें में मुख डालकर आवाज करने से उसी प्रकार की आवाज कुयें से निकलकर कानों में गूँजने लगती है, उसी प्रकार साधक के हृदय का प्रेम परमात्मा अथवा उसके व्यक्त रूप प्राणियों को प्राप्त होकर पुनः प्रेमी के पास ही वापस आकर उसे आत्म–विभोर कर देता है। इसका यह आशय नहीं कि परमात्मा अथवा प्राणी उसके प्रेम को स्वीकार नहीं करते और वह वैसे ही वापस कर दिया जाता है। बल्कि इसका आशय यह है कि जब साधक परमात्मा अथवा प्राणियों को प्रेम करता है तो उनकी ओर से भी प्रेम पाता है।

उदारता और त्याग सच्चे प्रेम की अनिवार्य विशेषतायें हैं। जिसके प्रति प्रेम का भाव रखा जाता है, उसके प्रति कुछ त्याग करने की इच्छा होती है। प्रेम का स्तर जितना ऊँचा होता है त्याग का भाव भी उसी अनुपात से बढ़ जाता है। भक्त भगवान के लिये, प्रेमी अपने प्रेमास्पद के लिये सर्वस्व त्याग कर देने को तत्पर रहते हैं। प्राणिमात्र से प्रेम होने के कारण साधक सदा ही सबके प्रति त्याग करने और कष्ट उठाने के लिये तैयार रहता है। समय आने पर वह त्याग करता भी है। तथापि सामान्य स्थिति में वह संसार की सेवा तो करता है और अपने उदार भाव का परिचय देता ही रहता है। उदारता और त्याग से रहित व्यक्ति को साधक नहीं माना जा सकता। प्रेम और त्याग का यह जीता जागता उदाहरण भील बालक एकलव्य के चरित्र में पूरी तरह से देखने को मिलता है।भील बालक एकलव्य धनुर्वेद सीखना चाहता था। उस समय धनुर्वेद के आचार्य द्रोणाचार्य थे। वे कौरवों और पाण्डवों को धनुर्विद्या सिखाने के लिये नित्य ही जंगल में ले जाया करते थे। एक दिन एकलव्य उनसे जंगल में मिला और शिष्य रूप में स्वीकार कर धनुर्विद्या सिखलाने की प्रार्थना की। किन्तु जंगली जाति का

होने के कारण द्रोणाचार्य ने उसे धनुर्विद्या की शिक्षा देने से इनकार कर दिया।

किन्तु एकलव्य इससे निराश न हुआ। उसने मिट्टी से द्रोणाचार्य की एक मूर्ति बनाई और उसी में अपनी हार्दिक श्रद्धा स्थापित कर धनुर्वेद का स्वयं अभ्यास करने लगा। उसकी अपनी श्रद्धा और निष्ठा फलीभूत हुई। वह उस समय का अद्वितीय धनुर्धर बन गया। और बाद में गुरु के कहने से अपना अँगूठा काटकर दे दिया।मिट्टी के गुरु ने उसे कोई सहायता न की। सहायता की, एकलव्य की अपनी गुरु–भक्ति ने जो कि उसके हृदय में निवास कर रही थी। इसके विपरीत यदि द्रोणाचार्य स्वयं भी उसे धनुर्विद्या सिखाते और एकलव्य के हृदय में भक्ति भाव न होता तो वह जरा भी प्रगति न कर पाता। कौरवों के साथ यही घटित हुआ। उनमें गुरु भक्ति की कमी थी, निष्ठा निर्बल थी, इसीलिये वर्णानुपर्यी द्रोण के सिखलाने पर वे अच्छे धनुर्धारी न बन सके। जबकि उन्हीं के साथ अर्जुन के हृदय में गुरु के प्रति सच्ची भक्ति और निष्ठा थी, जिससे वह अपने युग का यशस्वी और अमोघ धनुर्धर बन सका।

यही बात ईश्वर उपासना के सम्बन्ध में है। उसकी उपासना चाहे साकार अथवा निराकार रूप में की जाये, यदि श्रद्धा, भक्ति और निष्ठा आदि की, प्रेम प्रवण भाव की कमी रहेगी तो उपासना का कोई भी प्रकार सफल न होगा। इससे स्पष्ट है कि उपासना में पूजा पाठ, ध्यान, जप, तप आदि की उतनी महत्ता नहीं है जितनी की सच्ची प्रेम भावना की। उपासना के रूप में साधक जो भी जप तप, पूजा–पाठ करता है, उससे वह अपनी निष्ठा और प्रेमभावना को ही परिष्त एवं विकसित करता है। इस दिशा में वह जितनी जितनी प्रगति करता जाता है, उतना–उतना ही ईश्वरीय अनुभूति का अधिकारी बनता जाता है। साधना का सार प्रेम अथवा भक्ति को ही माना गया है, बाह्य आडम्बर को नहीं।साधक यदि इस बात की खबर रखना चाहता है कि उसकी साधना समुचित रूप से विकास की और बढ़ रही है या नहीं, तो उसे यह देखना होगा कि उसके हृदय में प्रेम भावना की वृद्धि हो रही है या नहीं। पूजा पाठ तो वह बहुत करता है, किन्तु उसकी भावना उसी प्रकार नीरस और कठोर बनी हुई है तो उसे समझ लेना चाहिये कि उसकी साधना निष्फल जा रही है। विकास की दिशा में वह एक कदम भी आगे नहीं बढ़ रहा है। और यदि वह यह अनुभव करता है कि उसके हृदय में आत्मीयता, उदारता और प्रेम की भावना जाग रही है, तो उसे विश्वस्त रूप से अपने पथ पर चलते जाना चाहिये। उसकी साधना सफलता की ओर जा रही होगी।

सच्ची तथा समुचित साधना का लक्षण यही है कि साधक के अन्तःकरण में प्रेम की सुधारा प्रवाहित होती चले। उसे दूसरों का दुःख सुख अपना जैसा अनुभव हो और प्राणि मात्र में अपनी आत्मा और अपनी आत्मा में प्राणि मात्र की आत्मा का दर्शन

करे। जिस दिन साधक इस सार्वभौमिक प्रेम की अनुभूति करने लगेगा, उसी दिन से वह परमात्म मिलन की परिधि में प्रवेश कर जायेगा।छल–कपट, ईर्ष्या–द्वेष आदि दोष प्रेम–भाव के बाधक होने के कारण साधक को आगे बढ़ने से रोकते हैं। अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये साधक को इन पर विजय प्राप्त करना ही होगी। हृदय को परिष्त एवं विकसित बनाने के उपाय यही हैं कि या तो अपने हृदय में प्रेम भावना का विकास किया जाय व उक्त दोषों का दमन किया जाय। इन दोनों उपायों का परिणाम एक ही होगा। प्रेम का विकास करने में प्रेम में वृद्धि होगी और दोषों का दमन हो जायेगा। और यदि दोषों का दमन कर दिया जायेगा तो अवरोधों के टूट जाने से हृदय में प्रेम भावना का विकास स्वयं ही होने लगेगा। तात्पर्य यह कि ईश्वर मिलन और आध्यात्मिक सफलता के लिये साधक के हृदय में प्रेम भाव का विकास तथा अभिवृद्धि होनी चाहिये। उसके लिये उपाय कोई भी क्यों न अपनाया जाये।

त्यागपूर्ण सेवा–भाव को प्रेम का प्राण माना गया है। प्रकट और अनुभव कितना ही क्यों न किया जाय, किन्तु यदि उसमें त्याग और सेवा भाव नहीं है तो वह सच्चा प्रेम नहीं है। वह अनुभूति आसक्ति अथवा मोह का ही एक रूप होगी। मोह अथवा आसक्ति आध्यात्मिक अवगुण है। इनके रहते हुये विकास की वाँछित दिशा में नहीं बढ़ा जा सकता। प्रेम आत्मा की शक्ति है और मोह अथवा आसक्ति उसकी निर्बलता, निर्बलता को साथ लेकर ईश्वर मिलन के उच्च पथ पर चढ़ सकना सम्भव नहीं।प्रेम की वंचना में मोह अथवा आसक्ति का परिपालन न होने लगे, साधक को इस बात की सावधानी रखनी चाहिये। यदि उसे किसी आस्पद से प्रेम तो अनुभव होता है पर उसके लिये त्याग करने की, उसकी सेवा करने की जिज्ञासा नहीं होती तो विश्वास कर लेना चाहिये कि वह अपनी आत्मा में प्रेम नहीं मोह का ही विकास कर रहा है। ऐसी दशा में उसे तुरन्त सावधान होकर अपना सुधार कर लेना चाहिये।

आवश्यक सूचना

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का **चौदहवां वार्षिकोत्सव,**
01 से 07 सितम्बर 2020 को मनाया जायेगा।

'दोपहर का सूरज' की संक्षिप्त भूमिका

अमर लाल सेठी

बाल्यकाल के संस्कार और धार्मिक साहित्य का पठन, चरित्र निर्माण में सहायक होते है। इसलिए बाल साहित्य का प्रकाशन में सतर्कता की आवश्यकता। आज लोग धर्मविहीन हो रहें, नैतिकता में गिरावट आ रही है। इसी कारण बच्चों में धार्मिक संस्कारों की भी कमी दिखाई दे रही है। बच्चों में धार्मिक प्रवृत्तियों को विकसित करके जीवन को विवेकपूर्ण दिशा देने के लिए प्रचुर मात्रा में बाल साहित्य का सृजन किया जाना चाहिए। इससे महामति श्री प्राणनाथ जी की वाणी जो सर्वधर्म का अंग है उसका विस्तार होगा। इसी उद्येश्य से दोपहर का सूरज का संक्षप्ति कर प्रकाशित किया जा रहा है। आशा है कि यह संकलन, बालकों के चरित्र निर्माण में तथा आध्यात्मिक उत्थान में एक अनुपम उपहार के रूप में सहायक होगा।

गतांक से आगे...

गांगजी भाई के घर ब्रह्मज्ञान की वारिश होने लगी। जिसे सुनने के लिए परमधाम की आत्माओं की भीड़ बढ़ने लगी। बहुत सी चमत्कारिक लीलाएं हुई। कभी आवेश स्वरूप प्रगट हो कर दर्शन देते, बातें करते, भोजन करते, कभी जमुना जी का खलखलाता हुआ जल बहने लगता। सब जल पीते और स्नान करते।

उनकी शरण में आने वाले सब 'सुन्दरसाथ' कहलाये। हरिदास जी भी उनकी शरण (चरणों) में आ गये। सुन्दरसाथ में स्त्री–पुरूश को साथ बैठा देखकर एक चुगल खोर ने कोतवाल को चुगली भी लागाई, पर जांच करने पर श्री राज जी की मेहर से कुछ भी हाथ न लगा।

इस नवतन पुरी में लोहाणा जाती के क्षत्रिय केशव राय जी का परिवार भी रहता था। उनके पाँच पुत्र थे– हरिवंश, श्यामल, गोवर्धन, मिहिरराज और उद्धव।

यह वही मिहिरराज है जिनके अंदर परमधम की इन्द्रावती जी की आत्मा ने प्रवेश किया तथा स्वयं परब्रह्म अक्षरातीत श्री राज जी ने विराजमान हो कर लीला की। एक दिन इन्हीं के चरणों में सबको अखण्ड मुक्ति मिलनी है।

हरिवंश जी की पत्नी मेघबाई की भतीजी अजबाई थी, जो कि गांग जी भाई की बहु थी। वह हरिवंश जी के घर आकर धनी की आवेश लीलाओं

कर वर्णन करती थी। जिसे सुनकर गोवर्धन जी भी निजानन्द स्वामी जी की शरण में आ गये। अब गोवर्धन जी आवेश लीला का वर्णन घर आकर सब को सुनाते। जिसे सुनकर श्री मिहिरराज जी की आत्मा श्री सद्गुरू जी से मिलने के लिए तड़पने लगी। भाई के मना करने पर वे एक दिन उनके पीछे–पीछे चल पड़े, बाहर रोकने पर रोने लगे। उन्होंने सब बात जाकर श्री निजानन्द स्वामी जी को बताई, कि मेरा 12 साल का छोटा भाई है, जो आप से मिलना चाहता है। श्री देवचन्द्र जी आज्ञा पाकर श्री मिहिरराज ने जैसे ही चरणों में प्रणाम किया, हृदय में जागृत बुद्ध आ गयी। वे देखते ही पहचान गये अरे! ये परमधाम की श्री इन्द्रावती जी की आत्म है, जिनके द्वारा आगे की सारी लीला होनी है। एकांत में उन्होंने सब बातें श्री मिहिरराज जी को बतायी, कि तुम्हारे ही तन से ब्रह्म वाणी उतरेगी। तुम विजयाभिनन्द बुद्ध निश्कलंक स्वरूप में जाहिर होवोगे। परमधाम की दो आत्मायें शाकुण्डल और शाकुमार राजघरा ने में आयी हुई हैं। जिनके जागृत होने पर यह माया का खेल समाप्त (खतम) हो जायेगा। श्री मिहिरराज जी ने उनकी बातों को अपने अन्तर्मन (दिल) में बसा लिया।

अब उस दिन से श्री मिहिरराज जी के मन में एक ही बात बनी रहने लगी कि यदि हम परमधाम से आये है, तो वह मुझे दिखायी क्यों नहीं देता?उन्होंने सोचा कि जरूर ही मुझ में कुछ ऐसे अवगुण है, जिस कारण परमधाम मुझे नहीं दिखता। उन्होंने अपने पास को कसौटी पर कसना शुरू कर दिया। भोजन न के बराबर लेने लगे। रास्ते मे कोई भी जानकर मिल जाता, तो उस से जर बचाकर चल देते, क्योंकि उससे बात करने जितना समय भी वी नश्ट नहीं करना चाहते थे अर्थात् अपना हर एक पल श्री राज जी के साथ उनके विरह में प्रेम में डूबे रह कर बिताना चाहते थे। परमधाम की चर्चा सुन कर आँखों से आसू निकलते रहते थे। शरीर का रंग पीला पड़ गया था। उनकी ऐसी हालत देखकर बालबाई सद्गुरू धनी श्री देवचन्द्र जी के पास गयी, और कहने लगी कि सद्गुरू महाराज श्री मिहिरराज जी का एक भाई गोवर्धन ठाकुर तो पहले ही चल बसा है, अब मिहिरराज जी भी उसी राह पर है। आप इनका ध्यान बांटने के लिए इन्हें किसी संसारिक काम में लगाइए। श्री देवचन्द्र जी के पूछने पर उन्होंने कहा, धनी "मुझे मेरे अवगुण बताइये।" श्री देवचन्द्र जी ने कहा प्रिय मिहिरराज तुम में कुछ भी अवगुण नहीं है। तो फिर मुझे परमधाम दिखायी क्यों नहीं देता। यह सब श्री राज जी की इच्छा से ही होता है। श्री राज जी मेरे अन्दर विराजमान हो कर परमधाम का वर्णन करते है। मेरे धाम गमन (तन छोड़ने) के बाद वे तुम्हारे अंदर लीला करेंगे तब तुम्हें भी परमधाम दिखाई देने लगेगा। श्री देवचन्द्र जी ने श्री मिहिरराज जी को पुराण संहिता तथा महेश्वर तंत्र आदि ग्रन्थों की खोज करने के लिये अहमदाबाद भेजा। इन ग्रन्थों को लेकर वे सद्गुरू जी के चरणों में आये तो श्री देवचन्द्र जी ने उन्हें खेता भाई से मिलने अरब भेजा। खेता भाई, जो कि गांगजी भाई के सगे भाई थे, जो कि 25 सालों से अरब में रह रहे थे। उनके पास बहूत सा धन जमा था। उस धन को लाकर सुन्दर साथ की सेवा में लगाने की सेवा श्री मिहीरराज जी को देकर अरब भेजा। श्री मिहीरराज जी ने श्री सद्गुरू जी की दी हुई सेवा को शिरोधार्य किया और अरब के लिये चल पड़े।

क्रमशः

सतगुरू की महिमा

आशीष जुनेजा, आस्ट्रेलिया

परम आदरणीय सुन्दरसाथ जी सतगुरू कौन है व उसकी पहचान क्या है?इस विशय से सम्बन्धित कुछ सुनने को मिला जिसने अन्तर्मन में सोचने को प्रेरित किया। श्री बीतक साहेब में मार्कण्डेय जी का वृत्तांत हम सबने सुना हुआ है। जिसमें मार्कण्डेय जी ने नारायण से उनके चरण कमलों में रहते हुए ही माया देखने की इच्छा की थी। और अन्त में अनको जाग्रत भी नारायण ने ही किया था। तो सिर्फ एक मिनट के लिए आप श्री राज जी के चरणों में बैठे हुए हैं। अगले ही पल आपकी दृश्टि वहाँ से हटकर इस माया के दुःख से भरे संसार को देखने लगी। आप माया के कश्टों से अति दुखी व भय से ग्रस्त हैं। अपने निज स्वरूप को, श्री राज जी व परमधाम को आप पूर्णतया भूल चुके हैं। अन्ततः सद्गुरू के रूप में आवेश स्वरूप से श्री राज जी महाराज स्वयं आकर, आपके जीव के ऊपर विराजमान दृश्टा आतम को बहुत मीठी आवाज लगाते हैं और परमहंस श्री जुगल दास जी की प्रेम पत्री के नवमें हरफ की तरह कुछ ऐसा कहकर आपकी सोयी हुई अन्तरात्मा को जाग्रत करने का प्रयास करते हैं।

"हे सुहागिन, सद्गुरू और पूर्णब्रह्म को एक ही स्वरूप कर देख। मनसा वाचा कर्मना करके, मन चित्त बुध आतम में, रोम–रोम निश्चय करके, बेशक, बेसुभे, विश्वास ल्याये धाम के धनी ही जानियो। तो हे सुहागिन मैं अति झीनी मकड़ी के तार से भी महीन खबर कहता हूँ और तुम भी सांचे ईमान से श्रवणा देके सुनियो कि सतगुरू का तन मानिंद तन दुनिया के है, और आतम इनों की पूर्णब्रह्म की निज दुल्हिन है। बारह हजार (12000) सखियों में दाखिल है, परन्तु इनकी रूह के ऊपर पूर्ण पारब्रह्म का जोश, आवेश, खासलखास हुकम बिराजा है। और पूर्ण पारब्रह्म ने अपने शब्दों में कई कोटि विधि से रोशन कर दिया है कि इस मृत्यु लोक में पूर्ण सतगुरू का जो स्वरूप है वो साक्षात मेरा ही प्रतिबिम्ब है और मेरा माशूक है। और मेरा मिलने का पूरन दरवाजा है। और इन माया में बिना मिले इस सरूप के– मैं न आगे किसी को मिला हूँ, और न अभी मिलता हूँ। और न आगे मिलूँगा। इनकी रूह दिल में पूर्णब्रह्म साक्षात् बिराजे हैं। पत्थर के बीच जैसे अगिन बसत है और जैसे काश्ठ में अगिन रहत है, सो मूर्ख अज्ञानियों को काश्ठ और पत्थर है, और जो कोई चतुर जुगती, निश्कपट आशिक भेदी है सो उसका काश्ठ पत्थर से अगिन निकाल लेते हैं और अपना कारज करते हैं। तिनकी दृश्टि में अश्ट

प्रहर चौसठ घड़ी पूर्णब्रह्म की लीला हो है और सब बिध उसकी इसमें दिखायी देती है और पल–पल धाम को जो सुख है सो इतहीं खेलत है। अगर पूरन भाव और सम्पूर्ण इश्क लेय के तरफ हादी माशूक के चितवन किया सोई ततक्षिण पूरन ब्रह्म रूपी अग्नि आशिक के दिल में प्रगट हो गई और पूरन ब्रह्म रूपी माशूक रोशन हुआ। और हो सुहागिन जब सम्पूर्ण रूहें श्री परमधाम में जाग्रत होयेंगीं, और जब श्री राज जी अपने कर्त्तव्य का इंसाफ करेंगे, तब जेता कर्त्तव्य तुमने साथ सतगुरू के किया है, तेता कर्त्तव्य तरफ तुम्हारे अपने लगायेंगें और कहेंगें कि तुमने उस माया में मुझसे ऐसी करी। और जेती कर्त्तव्य सतगुरू के सरूप ने तुमसे करी थी, सो श्री राज जी अपनी तरफ लगावेंगें और कहेंगें कि मैंने उस माया में तुमसे ऐसी करी थी और तुमने मोको ना चीन्हा। ताथे हे सुहागिन इत एक ही में अनंत कोटि बातों का मूल समझ लीजो। इन बातों की कथा–पोथी नहीं होती है, इन बातों की आदि अनादि से इशारत ही होती आयी है।''

तो सुन्दरसाथ जी, अब थोड़ा तारतम ज्ञान के प्रकाश से भी जान लेते हैं कि सद्गुरू का अर्थ क्या है व सद्गुरू कितने प्रकार के होते हैं। यह बात समझ लीजिये कि गुरू तो कई हो सकते हैं, पर सतगुरू नहीं। हम सद्गुरू के वास्तविक स्वरूप को न जानकर अपने–अपने सद्गुरू को सबसे बड़ा या ऊँचा बोलकर एक आध्यात्मिक भूल कर रहें हैं। चाहे बाबा दयाराम हों या मंगलदास जी या श्री रामरतन दास जी, इन सभी परमहंसों में कोई बड़ा या छोटा नहीं है। सद्गुरू का तो तन से या शरीर के नाम से कोई लेना–देना ही नहीं है। वाणी कहती है–

अन्दर निर्मल बाहेर दे ना देखाई,
वाकी पारब्रह्म सो पहचान ।

श्री महामति कहें संगत कर वाकी, कर वाहीं सो गोश्ठ ग्यान ।।

श्री श्री देवचन्द्र जी के धाम हृदय में युगल स्वरूप विराजमान हो गये तो वो सद्गुरू श्री देवचन्द्र जी कहलाये। अब वो सबके प्राणनाथ हो गये। जब वहीं युगल स्वरूप श्री मिहिरराज जी के अन्दर बैठी श्री इन्द्रावती जी की आत्मा के धाम हृदय में विराजमान हो गये तो वो महामति श्री प्राणनाथ जी कहलाये। तो आज आवश्यकता है कि हम भी निश्पक्ष आत्मि भाव से सद्गुरू और प्राणनाथ जी की पहचान करें। वाणी कहती है–

''दोऊ सुपन ए तीसरा, देखाया प्राणनाथ।''

अर्थात् माया का खेल दिखा भी वहीं रहें है और खेल में स्वयं आकर जगा भी वहीं रहें हैं। बस हमें इस जागनी ब्रह्मांड में इमान पर खड़ा होकर सत्य की पहचान करने की जरूरत है क्योंकि वाणी हमें सावचेत कर रही है–

''ए तो अधखिन को अवसर,
सो क्यों गमावत मांझ निंदर।।''

तो अब आप अपनी अन्दर की आँखें खोलिये सुन्दरसाथ जी।

गुजरात की जागनी यात्रा

राहुल श्रीमाली, झालोद, दाहोद गुजरात

अक्षरातीत श्री प्राणनाथजी की असीम मेहेर से गुजरात की धर्मधरा पर श्री राजन स्वामी जी की (ज्ञानपीठ सरसावा) के पावन सानिध्य में श्री प्राणनाथ जी मंदिर देवधा और नानी हांडी में दोनों जगह पर आयोजित तीन तीन दिवसीय आत्म जागृति शिबिर में अनेक भक्तजन एवं सुन्दरसाथ ने उपस्थित रहकर ब्रह्मवाणी चर्चा का रसपान किया।

सर्वप्रथम दिनांक १–११–१६ से ३–११–१६ तक नवीन श्री प्राणनाथजी मंदिर देवधा (दाहोद) में सेवा पधरावनी महोत्सव के रूप में त्रि दिवसीय आत्म जागृति शिबिर की शुरुआत हुई, पहले दिन पूज्य राजन स्वामीजी ,महात्मा अर्जुन जी, आचार्य सूर्यप्रतापजी, ज्योत्स्ना बहन जी, एवं अन्य महात्मा जन के द्वारा सेवा पधरावनी का कार्य संम्पन हुआ,बाद में ब्रह्मवाणी किरन्तन और पूज्य स्वामीजी की चर्चा शुरू हुई। देवधा में तीन दिन तक उपस्थित विशाल जनसमूह में ब्रह्मवाणी चर्चा का रस सभी महात्मा जन के द्वारा ऐसा उड़ेला गया कि समस्त साथ परमधाम के एक ही रंग में रंग गया। आखिरी दिन समस्त साथ ने पूर्णाहुति का भरपूर आनंद लिया।

दिनांक ४–११–१६ को दाहोद के ही गरबाडा के पास आंबली गाँव मे भी पूज्य श्री राजन स्वामी जी का एक दिन का भव्य कार्यक्रम उपस्थित विशाल सुन्दरसाथ की संख्या में सम्पूर्ण हुआ, जहां पूज्य स्वामीजी के द्वारा की हुई ब्रह्मवाणी चर्चा से सबने धन्यता का अनुभव किया।

उसके बाद दिनांक ५–११–१६ से ७–११–१६ से नानी हांडी (लिमडी,दाहोद) में त्रि दिवसीय आत्म जागृति ब्रह्मज्ञान शिबिर की शुरुआत पूज्य राजन स्वामीजी,पन्नाजी से पधारे पूज्य दिलीप जी एवं अन्य सबी महात्मा जन की उपस्थिति में हुई। तीन दिन तक लगातार सुबह ,दोपहर,एवं रात्रि के मंच में ब्रह्मवाणी का रस परोसा गया। राजकोट से ज्योत्स्ना बहन जी और सूरत से रुरेश भाई भंडेरी ने भी विशेष उपस्थित रहकर सुन्दरसाथ को चर्चा का रस पिलाया।

श्री प्राणनाथ सेवा समिति नानी हांडी द्वारा आयोजित इस तीन दिवसीय शिबिर में खेड़ा, राजकोट, सूरत, मोडासा, ईडर राजस्थान एवं दूर दूर से सुन्दरसाथ ने पधारकर कार्यक्रम की शोभा बढ़ाई. तीन दिन से बरस रहे ब्रह्मवाणी के रस से समस्त सुन्दरसाथ तृप्त हुआ और आनंद से भर गया।पूर्णाहुति के दिन बारिश का अटकाव भी सुन्दरसाथ के उत्साह को कम न कर सका और विशाल जन समूह की उपस्थिति में ब्रह्मवाणी पारायण और श्री बीतक की पूर्णाहुति की गई,पूर्णाहुति के दिन करीब १७० नए सुन्दरसाथ ने पूज्य राजन स्वामीजी से तारतम लेकर धामधनी से अपना नाता जोड़ा। आखिरी दिन श्री ५ पद्मावती पुरी धाम पन्नाजी के महात्मा जन की उपस्थिति एवम उनके सम्बोधन ने आखिरी दिन की शोभा में विशेष वृद्धि की।

इस तरह पूरे एक हफ्ते तक दाहोद की धर्मधरा पर जागनी कार्य का रस श्री राजन स्वामी जी की अगुवाई में बहता रहा और जनसमुदाय धामधनी से जुड़ता गया।

ऋतुचर्या एवं दिनचर्या

आचार्य सुभाष, श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा

आयुर्वेद का मुख्य प्रयोजन स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना तथा रोगी मनुष्य के रोग की चिकित्सा करना है। इस प्रयोजन की सम्पूर्ति हेतु आचार्यो ने दिनचर्या, रात्रिचर्या,ऋतुचर्या का विधान बताया है।

आयुर्वेद में काल को वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर, बसन्त, ग्रीष्म इन छः ऋतुओं में बाँटा गया है। इन ऋतुओं में पृथक–पृथक चर्या बतायी गयी है। यदि मानव इन सभी का ऋतुओं में बतायी गयी चर्याओं का नियमित व विधिपूर्वक पालन करता है, तो किसी प्रकार के रोग उत्पन्न होने की सम्भावना नहीं रहती है, अन्यथा अनेक मौसमी बिमारियों से ग्रसित हो जाता है।

मौसम के बदलाव के साथ ही खान–पान में बदलाव जरूरी है, ये बदलाव करके मौसमी–रोगों से बचा जा सकता है।

शिशिर ऋतुचर्या
(माघ, फाल्गुन – जनवरी, फरवरी)

सम्भावित रोग – अधिक भूख लगना, होंठ, त्वचा तथा बिवाई फटने लगती है। सर्दी व रूखापन, लकवा, बुखार, खांसी, दमा आदि रोगों की सम्भावना बढ़ जाती है।

पथ्य आहार–विहार (क्या सेवन करें ?) विविध प्रकार के पाक एवं लड्डू, अदरक, कद्दूकस करके हल्दी निम्बू का रस मिलाकर चटनी, जमींकन्द, पोषक आहार आदि सेवन करें।दूध का सेवन विशेष रूप से करें।तैल मालिश, धूप का सेवन, गर्म पानी का उपयोग करें।ऊनी एवं गहरे रंग के कपड़े, जूते–मौजे आदि से शरीर को ढककर रखें।

अपथ्य आहार–विहार (क्या सेवन न करें ?) बरसात एवं ठण्डी हवा से बचें।हल्का, रूखा एवं वायुवर्धक आहार न लें।

बसन्त ऋतुचर्या
(चौत्र, वैशाख – मार्च , अप्रैल)

सम्भावित रोग – दमा, खांसी, बदन दर्द, बुखार, कै, अरुचि, जी मिचलाना, बैचेनी, भारीपन, भूख न लगना, अफरा, पेट में गुड़गुड़ाहट, कब्ज, पेट में दर्द, पेट में कीड़े आदि विकार होते है।

पथ्य आहार–विहार पुराने जौ, गेंहू, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि धानों का आहार श्रेष्ठ है। मूंग, मसूर, अरहर एवं चने की दालें तथा मूली, घीय, गाजर, बथुआ, चौलाई, परवल, सरसों, मेथी, पालक, धनिया, अदरक आदि का सेवन हितकारी है।वमन, जलनेति, नस्य एवं कुंजल आदि हितकर है।परिश्रम,

व्यायाम, उबटन और आंखों में अंजन का प्रयोग हितकर है।शरीर पर चंदन, अगर आदि का लेप लाभदायक है। शहद के साथ हरड़, प्रातःकालीन हवा का सेवन, सूर्योदय के पहले उठकर योगासन करना एवं मालिश करना हितकर है।

अपथ्य आहार– विहार नया अन्न, ठण्डे एवं चिकनाई युक्त, भारी, खट्टे एवं मीठे आहार द्रव्य, दही, उड़द, आलू, प्याज, गन्ना, नया गुड़, भैंस का दूध एवं सिंघाड़े का सेवन अहितकर है।दिन में सोना, एक साथ लम्बे समय तक बैठना अहितकर है।

ग्रीष्म ऋतुचर्या
(ज्येष्ठ, आषाढ़ – मई , जून)

सम्भावित रोग – रूखापन, दौर्बल्य, लू लगना, खसरा, हैजा, चेचक, कै, दस्त, बुखार, नकसीर, जलन, प्यास, पीलिया, यत विकार आदि होने की सम्भावना होती है।

पथ्य आहार–विहार हल्के, मीठे, चिकनाई वाले पदार्थ, ठण्डे पदार्थ, चावल, जौ, मूंग, मसूर, दूध, शर्बत, दही की लस्सी, फलों का रस, सत्तू, छाछ आदि। संतरा, अनार, नींबू, खरबूजा, तरबूज, शहतूत, गन्ना, नारियल पानी, जलजीरा, कच्चा आम (कैरी) आदि का प्रयोग हितकर है।सूर्योदय से पहले उठना तथा उषापान हितकर है।सुबह टहलना, दो बार स्नान, ठण्डी जगह पर रहना, धूप में निकलने से पहले पानी पीना, तथा सिर को ढककर जाना, बार–बार पानी पीते रहना, सुगन्धित द्रव्यों का प्रयोग एवं दिन में सोना अच्छा है।

अपथ्य आहार–विहार धूप, परिश्रम, व्यायाम, सहवास, प्यास रोकना, रेशमी कपड़े, त्रिम सौन्दर्य प्रसाधन, प्रदूषित जल का सेवन अहितकर है।गरम, तीखे, नमकीन, तले हुए पदार्थ, तेज मसाले, मैदा, बेसन से बने, पचने में भारी खाद्य पदार्थों की ज्यादा मात्रा एवं शराब का सेवन अहितकर है।

वर्षा ऋतुचर्या
(श्रावण, भाद्रपद – जुलाई , अगस्त)

सम्भावित रोग – भूख कम लगना, जोड़ों के दर्द, गठिया, सूजन, खुजली, फोड़े–फुंसी, दाद, पेट में कीड़े, नेत्राभिष्यन्द (आंख आना), मलेरिया, टाइफाइड, दस्त और अन्य रोग होने की सम्भावना रहती है।

पथ्य आहार–विहार अम्ल, लवण, स्नेहयुक्त भोजन, पुराने धान्य (चावल, जौ, गेंहू) तथा गिलोय रस, घी एवं दूध का प्रयोग, छाछ में बनाई गई बाजरा या मक्का की राबड़ी, कद्दू, बैंगन, परवल, करेला, लौकी, तुरई, अदरक, जीरा, मैथी, लहसुन का सेवन हितकर है।संशोधित जल का प्रयोग करना चाहिए, कुंआ, तालाब और नदी के जल का प्रयोग बिना शुद्ध किये नहीं करना चाहिए। पानी को उबाल कर उपयोग में लेना श्रेष्ठ है।भीगने से बचें, भीगने पर शीघ्र सूखे कपड़े पहने, नंगे पैर, गीली मिट्टी या कीचड़ में नहीं जाना चाहिए, सीलन युक्त स्थान पर नहीं रहना चाहिए तथा बाहर से लौटने पर पैरों को अच्छी तरह धोकर पोंछ लेना चाहिए।तैल की मालिश करना हितकर है तथा कीट–पतंग एवं मच्छरों से बचने के लिए मच्छरदानी का उपयोग हितकर है।

अपथ्य आहार–विहार चावल, आलू, अरबी, भिण्डी तथा पचने में भारी आहार द्रव्यों का प्रयोग, बांसी भोजन, दही, अधिक तरल पदार्थ, आदि का

सेवन अहितकर है तथा तालाब एवं नदी के जल का सेवन उचित नहीं है।दिन में सोना, रात में जागना, खुले में सोना, अधिक व्यायाम, धूप सेवन, अधिक परिश्रम, अधिक सहवास, अज्ञात नदी, जलाशय में स्नान एवं तैरना अहितकर है।

शरद ऋतुचर्या
(अश्विन, कार्तिक – सितंबर , अक्टूबर)

सम्भाविवत रोग – आयुर्वेद के मत से शरद काल में पित्त का प्रकोप होता है जो शरीर में अग्नि का प्रधान कारक है। अतः ज्वर, रक्तविकार, दाह, छर्दि (उल्टी, कै) सिरदर्द, चक्कर आना, खट्टी डकारें, जलन, रक्त एवं कफ विकार, प्यास, कब्ज, अफरा, अपच, जुकाम, अरुचि आदि विकारों की सम्भावना रहती है। इस ऋतु में विशेष रूप से पित्त प्रति वाले व्यक्तियों को अधिक कष्ट होता है।

पथ्य आहार–विहार हल्का भोजन, पेट साफ रखना हितकर है।मधुर एवं शीतल, तिक्त (कड़वा नीम, करेला आदि), चावल, जौ का सेवन करना चाहिए।करेला, परवल, तुरई, मैथी, लौकी, पालक, मूली, सिंघाड़ा, अंगूर, टमाटर, फलों का रस, सूखे मेवे, नारियल का प्रयोग करना चाहिए।इलाइची, मुनक्का, खजूर, घी का प्रयोग विशेष रूप से करना चाहिए।त्रिफला चूर्ण, अमलतास का गूदा, छिलके वाली दालें, मसाले रहित सब्जी, गुनगुने पानी के साथ नींबू के रस का सेवन प्रातःकाल, रात्रि में हरड़ का प्रयोग विशेष लाभदायक है।तैल मालिश, व्यायाम तथा प्रातः भ्रमण, शीतल जल से स्नान करना चाहिए, हल्के वस्त्र धारण करें, रात्रि में चन्द्रमा की किरणों का सेवन करें, चन्दन तथा मुल्तानी मिट्टी का लेप लाभदायक है।

अपथ्य आहार–विहार मैंदे से बनी हुई वस्तुऐं, गरम, तीखा, भारी, मसालेदार तथा तेल में तले हुए खाद्य पदार्थों का उपयोग न करें। अमरूद खाली पेट न खाऐ। शाक, वनस्पति घी, मूंगफली, भुट्टे, कच्ची ककड़ी, दही आदि का अधिक उपयोग न करें।दिन में न सोंऐ, मुंह ढककर न सोंए तथा धूप से बचें।

हेमन्त ऋतुचर्या
(मार्गशीर्ष, पौष – नवम्बर , दिसंबर)

सम्भावित रोग – वातज रोग, वात–श्लैष्मिक रोग, लकवा, दमा, पांवों में बिवाई फटना, जुकाम आदि।

पथ्य आहार–विहार शरीर संशोधन हेतु वमन व कुंजल आदि करें।स्निग्ध, मधुर, गुरु, (भारी) लवणयुक्त भोजन करें।घी, तेल तथा उष्ण मोगर, गोंद, मैथी के लड्डू, च्यवनप्राश, नये चावल, आदि का सेवन हितकारी है।तैल मालिश, उबटन, गुनगुने पानी से नहाना, ऊनी कपड़ों का प्रयोग, सिर, कान, नाक, पैर के तलुओं पर तैल मालिश करें। गरम एवं गहरे रंग के वस्त्र धारण करें। आग तपना एवं धूप सेंकना हितकारी है।हाथ–पैर धोने के लिए गुनगुने जल का प्रयोग करें। जूते–मौंजे, दस्ताने, टोपी, मफलर, स्कार्फ का प्रयोग करना चाहिए।

अपथ्य आहार–विहार ठण्डे, वायु बढ़ाने वाली वस्तुओं का सेवन, नपातुला भोजन, बहुत पतला भोजन न करें।दिन में नहीं सोना चाहिए, अधिक हवादार स्थान में रहना तथा ठण्डी हवा हानिकारक है। खुले पांव नहीं रहना चाहिए तथ हल्के सफेद रंग के वस्त्र न पहने।

सदस्यता फार्म

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित **''तारतम मंजरी''** हिन्दी मासिक पत्रिका के सदस्य बनें।

कार्यालय– श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, नकुड़ रोड़, सरसावा

जिला– सहारनपुर, उत्तर प्रदेश, भारत 247232

मोबाईल न.– 7088120381 (कार्यालय) 8650851010,9725389547,9314193262

email- tartammanjari@gmail.com shri, prannathgyanpeeth@gmail.com

महोदय,

मैं ''तारतम मंजरी'' का वार्षिक/आजीवन शुल्क रु. ..... नकद/ मनी ऑडर/ बैंक ड्राफ्ट/

पे – इन – स्लिप ..... दिनांक .....

अंतर्गत अदा कर रहा हूँ।

अतः मुझे हर माह तारतम मंजरी निम्न पते पर भेजें।

नाम ..... पिता/पति का नाम .....

पता .....

..... राज्य ..... पिनकोड़ .....

फोन ..... व्हाट्सएप न. ..... e-mail .....

(विशेष नियम)

(1) सदस्यता शुल्कः वार्शिक 130/–, आजीवन 1200/–

(2) ड्रफ्ट ''तारतम मंजरी'' के नाम सरसावा, सहारनपुर में देय होना चाहिये।

(3) कृपया अपना नाम व पूरा पता स्पश्ट रूप से भरें।

(4) सदस्यता शुल्क ''साहित्य खाता'' (श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, ट्रस्ट) के

खाता संख्या 1335000100118751@IFS CODE- PUNB0133500

(पंजाब नेशनल बैंक, सलेम्पुर(सहारनपुर)उ.प्र. में जमा करा सकते हैं।

सम्पादक

प्रेम निमंत्रणा **सेवा निमंत्रणा** **समर्पण निमंत्रणा**

मानखे देह अखण्ड फल पाइये, सो क्यों पाए के वृथा गमाइये।
ये तो अधखीन को अवसर, सो गमावत माझ निन्दर ।।

प्राणाधार प्यारे सुन्दरसाथ जी एवं धर्म–प्रेमी सज्जनों सादर प्रेम प्रणाम जी

आपको सूचित करते हुए अपार हर्ष हो रहा है कि अक्षरातीत श्री प्राणनाथ जी की पा एवं सतगुरु महाराज रामरतन दास जी की आशीर्वाद एवं धर्म–वीर जागनी रतन सरकार श्री जगदीश चन्द्र जी की प्रेरणा से **दिनांक 29/12/2019 से 02/01/2020 तक पंच– दिवसीय आत्म–जागृति शिविर का आयोजन उत्तर पूर्वांचल श्री निजानन्द जागनी सेवा समिति एवं आत्म–जागृति महिला मण्डल द्वारा श्री प्राणनाथ जी मन्दिर, शुकलाई (असम)** में होना निश्चित किया गया है।

आप सभी सुंदरसाथ जी एवं सम्पूर्ण धर्म–प्रेमी सज्जन अधिक से अधिक संख्या में पधारकर धर्म लाभ प्राप्त करें और अपने आत्म–जागृति के पथ पर चलने की प्रयास करें।

प्रमुख–वक्ता
परम–पूज्य श्री राजन स्वामीजी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, उत्तर प्रदेश

कार्यक्रम स्थल – श्री प्राणनाथ जी मन्दिर, शुकलाई

संपर्क नंबर
कल्पना शर्मा जी (अध्यक्षा) – 7002237273
राम किशोर कट्टेल – 8638477838
सूरज गुरुंग जी – 09101803546
बादल रिमाल जी – 091017 73656

जो भी सुन्दरसाथ इस कार्यक्रम में भाग लेने जा रहें है उनके लिये **आवश्यक सूचना** फ्लाइट से जानें वाले सुन्दरसाथ को गुवाहटी की फ्लाइट लेनी पड़ेगी। ट्रेन से आनेवाले के लिये आसाम के Rangiya (RNY) Station तक का टिकिट करना होगा।

प्राणाधार सुन्दरसाथ जी!

सादर प्रणाम जी!

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गौशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी ज्ञानपीठवासियों, विद्यार्थियों, आचार्यों एवं आगुन्तक अतिथियों में निशुल्क किया जाता है। आप सभी सुन्दरसाथ एवं उदारमना दानदाताओं से श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, रहने के लिए उत्तम व्यवस्था हो, उसके लिए आधुनिक ढ़ंग से गौशाला का निर्माण कार्य होने जा रहा है, इसके लिए जो भी सज्जन एवं सुन्दरसाथ दान देना चाहें ज्ञानपीठ उनका स्वागत करता है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं, और आप आने में असमर्थ हैं तो कृपया ज्ञानपीठ के खाते पर राशि जमा करके सूचित कर सकते हैं। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि आपके द्वारा दिया गया दान गौवों के संवर्धन में ही लगाया जायेगा।

।।धन्यवाद।।

विनम्र निवेदन

धाम धनी के लाडले सुन्दरसाथ जी! वर्तमान समय में श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ सरसावा में शिक्षण, साहित्यिक एवं निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है। जिन सुन्दरसाथ ने इन कार्यों के लिए अपनी सेवाएं लिखवायी है या स्वतः उनके मन में सेवा करने की इच्छा है, कृपया वे इन खातों में धनराशि भेजने का कष्ट करें। इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस सेवा की धनराशि भेजी जा रही है, मात्र उसी खाते की C.B.S.A/C संख्या में भेजें।

प्रणाम जी

सेण्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया

1. खाता धारक का नाम–श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रष्ट
   खाता संख्या–3290805513
2. खाता धारक का नाम–श्री ज्ञानपीठ प्रकाशन
   खाता संख्या– 3290804553

पता–शाखा–सरसावा, सहारनपुर उ. प्र. 247232

MICR-Code - 247016005

IFSC CODE-CBIN0282531

सामान्य खाता संख्या
1335000100111916
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

साहित्य खाता संख्या
1335000100118751
पंजाब नेशनल बैंक
सलेमपुर (सहारनपुर) उ.प्र.
RTGS/NEFT IFS
CODE - PUNB0133500

भवन निमार्ण खाता संख्या
34971188767
भारतीय स्टैट बैंक
(11439) सरसावा, सहारनपुर
उत्तरप्रदेश, पिन- 247232
IFS CODE- SBIN0011439

श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा से प्रकाशित साहित्यों की सूची

क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य	क्र. स.	ग्रन्थ का नाम	मूल्य
1.	श्री कुलजम स्वरूप (मूल)	700.00	36.	बोध मंजरी (नेपाली)	15.00
2.	श्री बीतक साहेब टीका	400.00	37.	बोध मंजरी (उड़िया)	15.00
3.	श्री रास टीका	150.00	38.	शाश्वत सत्य की ओर	15.00
4.	श्री प्रकाश टीका	300.00	39.	सत्य को बाटो (नेपाली)	15.00
5.	श्री कलश टीका	225.00	40.	संसार से परमधाम की ओर	20.00
6.	श्री खटरूती टीका	80.00	41.	श्री प्राणनाथ महिमा	20.00
7.	श्री किरन्तन टीका (हिन्दी)	300.00	42.	श्री ब्रह्मवाणी चर्चा	65.00
8.	श्री किरन्तन टीका (अंग्रेजी)	350.00	43.	निजानन्द संस्कार पद्धति	15.00
9.	श्री किरन्तन टीका (नेपाली)	300.00	44.	सेवा पूजा	30.00
10.	श्री खुलासा टीका	250.00	45.	मूल स्वरूप की ओर	80.00
11.	श्री सनंध टीका (अप्रकाशित)		46.	चितवनी	5.00
12.	श्री खिलवत टीका	180.00	47.	आर्ष ज्योति	120.00
13.	श्री परिक्रमा टीका	275.00	48.	तारतम के निर्झर	70.00
14.	श्री सागर टीका	170.00	49.	तारतम पीयूषम्	70.00
15.	श्री सिनगार टीका	300.00	50.	हमारी शाश्वत सम्पदा	60.00
16.	श्री सिन्धी टीका	150.00	51.	खाद्य परिशीलन	250.00
17.	श्री मारफत सागर टीका (अप्रकाशित)		52.	विनाश का प्रर्याय मांसाहार	60.00
18.	श्री क्यामत नामा टीका (अप्रकाशित)		53.	विराट नक्शा (केलेण्डर रूप में)	50.00
19.	श्री मुखवाणी संगीत	150.00	54.	सौवं क्यामतनामा	90.00
20.	विद्वददमनी	200.00	55.	अनमोल मोती	5.00
21.	पट दर्शन	200.00	56.	सागर के मोती	10.00
22.	धाम सुषमा	60.00	57.	नित्य पाठ	5.00
23.	जागो और जगाओ	100.00	58.	ये स्वर्णिम पल	10.00
24.	दोपहर का सूरज	60.00	59.	मुख्तार हिन्द	20.00
25.	प्रेम का चाँद	65.00	60.	शब–ए–मेयराज	15.00
26.	निजानन्द योग	60.00	61.	अफलातूनी इलम	20.00
27.	हमारी रहनी	50.00	62.	बुलन्द मुकदमा	40.00
28.	ब्रह्माण्ड रहस्य	40.00	63.	झूठ ही झूठ	60.00
29.	श्री मद्भागवत यथार्थम्	30.00	64.	यथार्थ दीपिका	30.00
30.	ध्यान की पुष्पांजली	70.00	65.	प्रश्नमाला	5.00
31.	कड़वे सच	50.00	66.	निजानन्द चित्रकथा	30.00
32.	तमस के पार (बड़ी)	40.00	67.	शेख जी मीर जी का बयान	20.00
33.	तमस के पार (छोटी)	20.00	68.	फरमान	30.00
34.	तमस के पार (पंजाबी)	40.00	69.	स्वास्थ्य के प्रहरी	30.00
35.	बोध मंजरी (हिन्दी)	15.00	70.	सत्यांजलि	40.00

सुभाषित वचन

- हम धर्म *को* मानते हैं पर धर्म *की* नहीं मानते ।
- भक्ति के बिना ज्ञान अंहकार को जन्म देता है जबकि ज्ञान का बिना भक्ति अंधविश्वास को जन्म देती है।
- सत्य सदैव तीन चरणों से गुजरता है - उपहास, विरोध और अन्ततः स्वीकृति।
- मन के अनुकूल हो तो धनी की कृपा और मन के विपरित हो तो धनी की इच्छा, इस तथ्य को यदि जीवन में स्वीकार करेंगे तो आनन्द ही आनन्द है।
- हमारी नीयत से ईश्वर प्रसन्न होते हैं, और दिखावे से इंसान ... यह हम पर निर्भर करता है कि, हम किसे प्रसन्न करना चाहते हैं।
- प्रकृति ने हमारे शरीर की रचना कुछ इस प्रकार की है कि ना तो हम अपनी पीठ थपथपा सकते हैं, और ना ही स्वयं को लात मार सकते हैं । इसलिए हमारे जीवन में मित्र और आलोचक होना जरुरी है ।।

BOOK POST

RNI:UPHIN/2016/46009
RNP/SHN/18-2019-21

प्रकाशक
पू.श्री राजन स्वामी जी

प्रकाशन कार्यालय
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ, सरसावा, नकुड़ रोड, जिला–सहारनपुर (उ.प्र.)
पिन कोड–247232

सम्पादक
श्री एस. पी. आर्य
भूतपूर्व आई. ए. एस.

तारतम मंजरी पत्रिका के स्वामी
श्री प्राणनाथ ज्ञानपीठ ट्रस्ट, सरसावा
जिला–सहारनपूर, दूरभाष–8650851010
अवतरित न होने पर कृपया इस पते पर लौटाये।
धन्यवाद

सेवा में,